बाल विज्ञान पत्रिका

अक्टूबर 2008 • 15 रुपए

चकमक

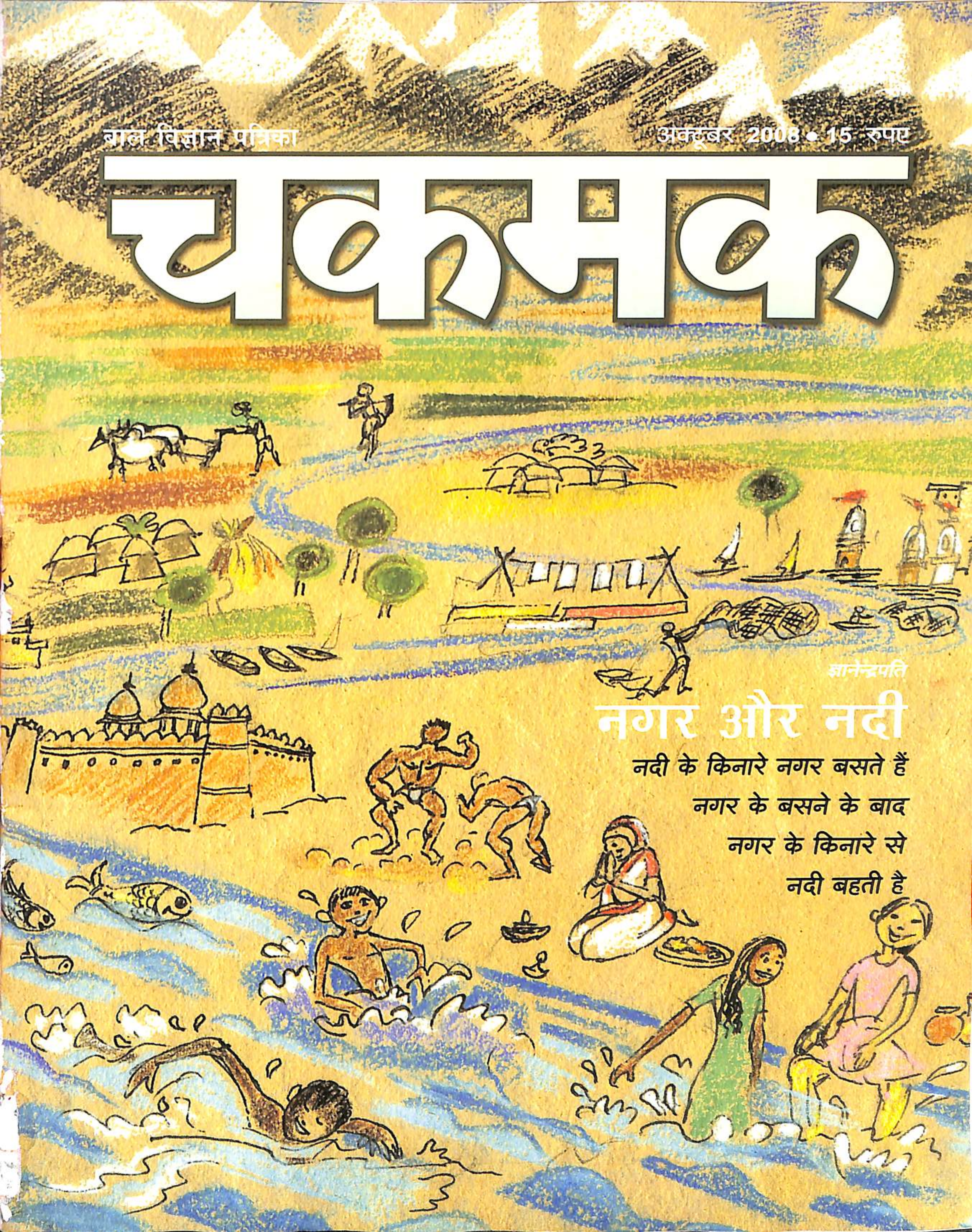

ज्ञानेन्द्रपति

नगर और नदी

नदी के किनारे नगर बसते हैं
नगर के बसने के बाद
नगर के किनारे से
नदी बहती है

रेक्स डी रोज़ारियो

फल-सब्ज़ियों की कला

चकमक में हम कला की बातें करते ही रहते हैं, खासकर ऐसी कलाकृतियों की जो आसपास पाई जाने वाली चीज़ों से बन सकती हैं – जैसे फूल, पत्तियों, कागज़, बीज, कंकड़, आदि हैं। थाइलैंड, जापान, चीन व अन्य पूर्व एशियाई देशों में फल-सब्ज़ी तराशना एक लोकप्रिय कला है, खासकर त्यौहारों के अवसर पर। थाइलैंड में इसे "काइ-सू-लुक" के नाम से जाना जाता है। इस मूर्तिकला में सबसे पसन्दीदा फल तरबूज़ है।

चलो, सब्ज़ी व फलों से मूर्तिकला फल-सब्ज़ी तराशने के कुछ दुर्लभ उदाहरण देखते हैं...

तरबूज़ से बने फूल

रूखे मिजाज़ वाला बुजुर्ग

मेंढक किस फल से बना है?

सब्ज़ी व फलों से बना गुलदस्ता

सब्ज़ी व फलों से मूर्तिकला

चुकन्दर का गुलाब

कद्दू से बने दो दानव "जैक-ओ-लैंटर्न"

दो और उदाहरण पेश हैं – अमरीका में हेलोईन के अवसर पर कद्दू में तराशी गई दो दानव आकृतियाँ। हेलोईन आयरलैंड, स्कॉटलैंड, वेल्स का त्यौहार है जो फसल की कटाई के बाद मनाया जाता है। लोग विशेष पोशाक और नकाब पहनकर दुष्ट आत्माओं को मार भगाते हैं। कद्दू को तराशकर उसमें मोमबत्ती जलाना – "जैक-ओ-लैंटर्न" – इस त्यौहार का प्रतीक है। कद्दू से बने दो दानव "जैक-ओ-लैंटर्न"।

और अण्डों से नक्काशी...

शुतुरमुर्ग के अण्डे में बगुले

रीया का अण्डा

हंस का अण्डा

ईमू के अण्डे से तितली

चकमक

बाल विज्ञान पत्रिका • 265 • अक्टूबर 2008

इस अंक में

तहान..2
एक साल आलू के नाम........................4
रमज़ान..6
मटर के दानों की करामात......................8
डरी चींटियाँ 10
पाबूजी की पड़ 12
प्यारे भाई रामसहाय............................14
उड़ने वाला साँप..................................16
योह भी खूब रही.................................18
भगवान का सवाल...............................20
मेरा पन्ना 22
चित्र पहेली 27
एक अपील..29
अमीर खुसरो की पहेलियाँ 30
हरी घास की छप्पर... 32
"प" से शुरू होने वाले चीज़ें....................38
कौए भी औज़ार बनाते हैं........................40

आवरण: तापोशी घोषाल

एस.आई.जी/आई.सी.आई.सी.आई. बैंक के वित्तीय सहयोग से प्रकाशित

सम्पादन
सुशील शुक्ल
शशि सबलोक

सहायक सम्पादक
कविता तिवारी

सम्पादकीय सलाहकार
रेक्स डी रोज़ारियो
तेजी ग्रोवर

विज्ञान सलाहकार
सुशील जोशी

डिज़ाइन
अतनु राय
डिजिटल एक्सप्रेशन्स

वितरण
अनिल लोखण्डे

सहयोग
मिहिर
प्रीति चौहान
कमलेश यादव

सदस्यता शुल्क
एक प्रति - 15.00
वार्षिक - 150.00
दो साल - 275.00
तीन साल - 400.00
आजीवन - 3000.00

सभी डाक खर्च हम देंगे। चन्दा (एकलव्य के नाम से बने) मनीऑर्डर/चैक से भेज सकते हैं। भोपाल के बाहर के चैक में 80.00 रुपए अतिरिक्त जोड़ें।

एकलव्य
ई-10, शंकर नगर, बीडीए कॉलोनी, शिवाजी नगर
भोपाल, म.प्र. 46 2016
फोन: (0755) 2671017, 2550976, 6549033
फैक्स: (0755) 2551108
chakmak@eklavya.in
circulation@eklavya.in
www.eklavya.in

मिहिर

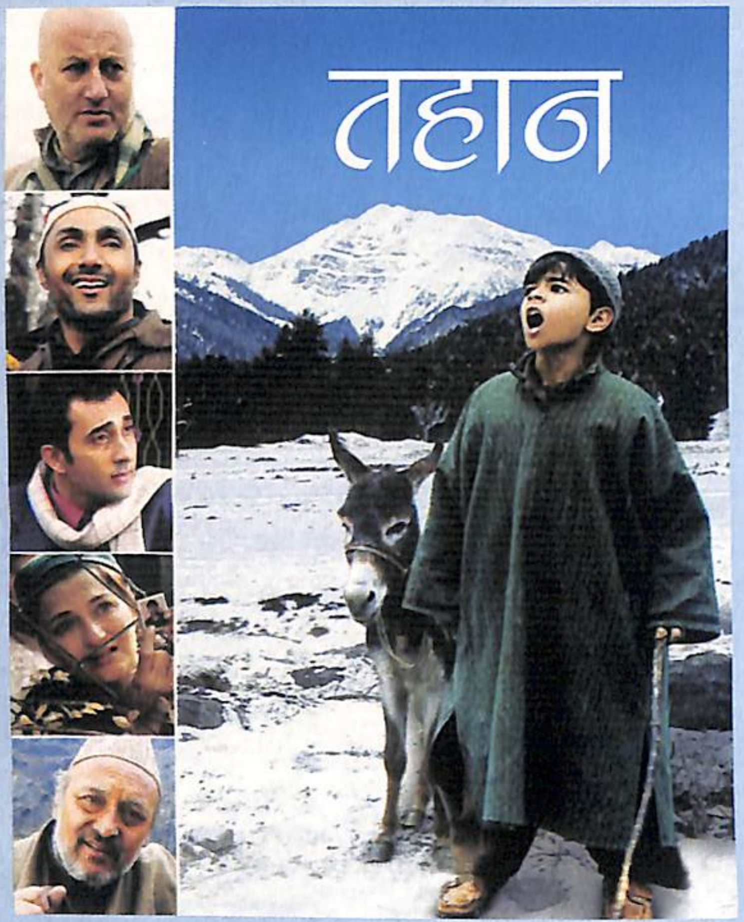

तहान दो दोस्तों की कहानी है – तहान और बीरबल की। तहान है आठ साल का कश्मीरी लड़का और बीरबल है उसका गधा। दोनों साथ खेलते हैं, साथ काम करते हैं। तहान बीरबल को बहुत प्यार करता है और बीरबल तहान को। तहान के पिता कुछ साल से घर वापिस नहीं आए हैं। घर में माँ और बड़ी बहन ज़ोया और बाबा है। बाबा उसे कहानियाँ सुनाते हैं। ऐसी कहानियाँ जिनमें एक रोशनी की किरण आएगी और सारे घर को खुशियों से भर देगी। कालीन पर बनी तितलियाँ ज़िन्दा हो जाएँगी और पूरे घर में उड़ा करेंगी। तहान और बीरबल दोनों कश्मीर के बदलते माहौल को देखते हैं। उजड़े हुए घर देखते हैं। रोती हुई औरतें देखते हैं। अपनों की तस्वीर के सहारे उनकी खोज में लगे हुए लोगों के आँसू देखते हैं।

कश्मीर में खूबसूरती और अकेलेपन का खौफ एक साथ मौजूद है। उजाड़ पड़े कश्मीरी पंडितों के घरों को देखकर तहान घबरा जाता है। बीरबल जाने कहाँ भाग जाता है। तहान और बीरबल दोनों को अकेलेपन से डर लगता है। जमी हुई झील पर चलने से भी ज़्यादा डरावना है अकेलेपन का डर।

एक दिन तहान के बाबा की मौत हो जाती है और बीरबल को बेच दिया जाता है। तहान बीरबल को वापिस पाने के लिए क्या-क्या नहीं करता! अब दोस्त के बिना रहा भी तो नहीं जाता ना! और फिर बीरबल भी तो तहान के बिना नहीं रह पाता यह भी सबको मालूम है। एक दौड़ होती है बीरबल और जफर के खच्चरों के बीच। और बीरबल खच्चरों को दौड़ में हरा देता है! लेकिन फिर भी तहान को बीरबल नहीं मिलता। जफर कहता भी है.. “हमारी किस्मत में गधे नहीं लिखे दोस्त।” और ऐसे ही बीरबल को पाने की कोशिश में तहान को एक ऐसा काम करने को कहा जाता है जो औरों को नुकसान पहुँचा सकता है। अब तहान क्या करे? क्या बीरबल को पाने के लिए वो कोई ऐसा काम करे जो ठीक ना हो? मैं तुम्हें फिल्म का अन्त तो नहीं बताऊँगा लेकिन तुम तहान के लिए ज़्यादा परेशान ना हो इसलिए बता देता हूँ कि आखिर में सब ठीक हो जाता है!

तहान की सिनेमेटोग्राफी कमाल की है। खासकर एक जगह गरम-सुलगते कोयले के बीच चटकती बर्फ का दृश्य आपमें बहुत अलग-सा अहसास भर देता है। इसकी कोई खास वजह? है ना.. फिल्म के निर्देशक सन्तोष सिवान मूलतः एक सिनेमेटोग्राफर हैं। उनका ट्रेन के ऊपर फिल्माया *दिल से* का गाना “छैयाँ छैयाँ” तो सबको याद होगा ही। सन्तोष इससे पहले भी एक लड़की और उसके प्यारे पिल्ले “हैलो” की कहानी हमें सुना चुके हैं। *तहान* में कश्मीर की खूबसूरती के साथ अकेलेपन को भी कैमरे ने बखूबी कैद किया है। चक मक

इस फिल्म में तहान का किरदार निभाया है पूरव भण्डारे ने। यह फिल्म उनके कमाल के अभिनय के लिए भी याद की जाएगी।

कुछ खास बातें जो *तहान* से पता चलीं!

- गधे से बात करते वक्त उसके एक कान में बात कहनी चाहिए और दूसरा कान बन्द कर देना चाहिए। नहीं तो वो बात को एक कान से सुनकर दूसरे कान से निकाल देता है।
- ज़िन्दगी एक दास्तान है। इसमें बहुत सारी छोटी-छोटी कहानियाँ बिखरी होती हैं। और हर कहानी का एक मकसद होता है।
- कई बार गधे और खच्चर की दौड़ में गधा भी जीत जाता है।
- खुदा ने गधे को ऐसी जगह पर दो आँखें दी हैं कि वह अपने पीछे भी देख सकता है! इसलिए उसे बिल्कुल ठीक-ठीक पता चल जाता है कि कब और कहाँ दुलत्ती मारनी है।
- चाहे इंसान हो चाहे जानवर, आखिर में करते सब अपने मन की ही हैं।
- ये पहाड़, ये वादियाँ, ये दिलकश नज़ारे सब किसके हैं? इस सवाल का जवाब कुछ उल्टा है। दरअसल हम सब इन पहाड़ों, नदियों, वादियों के हैं। अगर तुम ध्यान से देखो तो हम सब अपने आसपास की प्रकृति का ही तो हिस्सा हैं।
- अगर कड़ाके की ठण्ड है और कई दिनों से लगातार बर्फबारी हो रही है तो एक बात तो तय है कि उसके बाद सूरज निकलेगा और चमकती धूप खिलेगी। ऐसे ही अगर ज़िन्दगी में बहुत सारे गम एक साथ आ जाएँ और सब मुश्किल लगने लगे तो मानकर चलो कि खुशियों का मौसम दरवाज़े पर खड़ा इन्तज़ार कर रहा है। वो बस आने ही वाला है।

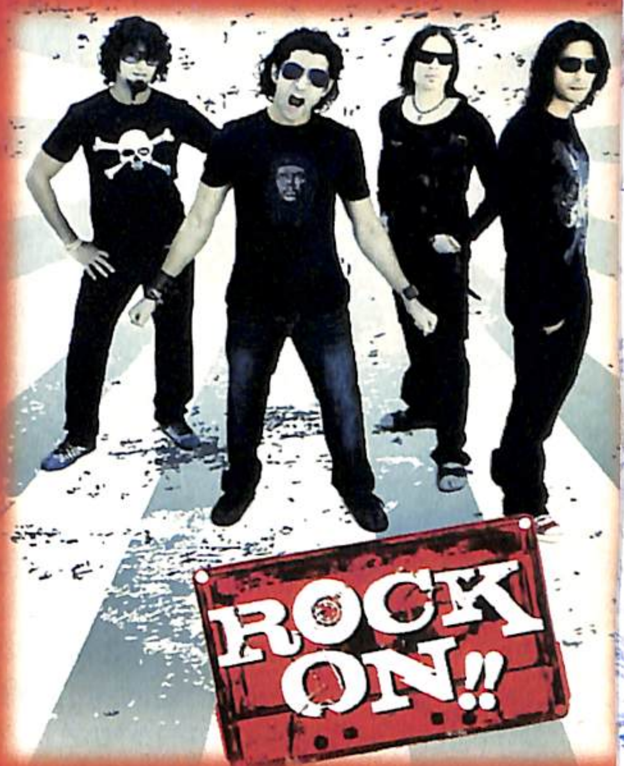

सोचा है, सोचा नहीं तो सोचो अभी

आस्मां है नीला क्यों, पानी गीला-गीला क्यों
गोल क्यों है ज़मीन, सिल्क में है नरमी क्यों
आग में है गरमी क्यों, दो और दो पाँच क्यों नहीं..
पेड़ हो गए कम क्यों, तीन हैं ये मौसम क्यों
चाँद दो क्यों नहीं, दुनिया में है जंग क्यों
बहता लाल रंग क्यों, सरहदें हैं क्यों हर कहीं
सोचा है ...

बहती क्यों है हर नदी, होती क्या है रोशनी
बर्फ गिरती है क्यों, दोस्त क्यों है रूठते
तारे क्यों है टूटते, बादलों में बिजली है क्यों
सोचा है ...

सन्नाटा सुनाई नहीं देता, और हवाएँ दिखाई नहीं देती
सोचा है क्या कभी, होता है यह क्यों...
सोचा है ....

फिल्मः रॉक ऑन
गायकः फरहान अख्तर
गीतकारः जावेद अख्तर
संगीतकारः शंकर, अहसान, लॉय

एक साल आलू के नाम

टी. वी. वेंकटेश्वरन

यह न मज़ाक है, न ही बीते ज़माने का किस्सा। यह ज़िक्र है इसी साल का जिसका अक्टूबर महीना अभी बीत रहा है। यानी साल 2008 का। इसलिए नहीं कि आलू हमारी प्लेट में कितने-कितने रूप बदलकर आता है। कभी पकौड़े बनकर, कभी परांठे, पूरी, चिप्स, समोसा, चाट, हलवा, चोखा, सेव, खीर के रूप में। कितनी सब्ज़ियाँ तो आलू के बिना अधूरी-सी ही लगती हैं। सन 2008 को अन्तर्राष्ट्रीय आलू वर्ष बनाने का कारण इससे कहीं बड़ा है। असल में आलू को एक ऐसा खाद्य पदार्थ माना गया है जो दुनिया भर की गरीबी और भुखमरी की समस्या को खत्म कर सकता है। इसी उम्मीद के साथ इस साल और आगे भी खासकर गरीब देशों के किसानों को आलू उगाने के लिए कहा जाएगा।

क्या आलू का जन्म यूरोप में हुआ?

दुनिया के किसी भी देश की रसोई में आलू को लेकर हमारे जितने प्रयोग न हुए होंगे। इसका मतलब यह नहीं कि आलू का जन्म भारत में हुआ। आलू को भारत आए अभी 500 साल ही हुए होंगे। इतिहासकारों का कहना है कि जहाँगीर के ज़माने में पहली बार यूरोपीय व्यापारियों ने भारतीयों को आलू चखाया। दुनियाभर को भी आलू से इन्होंने ही मिलवाया।

सफर-ए-आलू

आलू की यात्रा आज से करीब 8,000 साल पहले शुरू हुई थी। उस समय शिकार करने वाले लोगों ने टिटीकाका झील के आसपास बड़ी संख्या में पाए जाने वाले जंगली आलू की खेती शुरू की। टिटीकाका झील दक्षिण अमरीका में एंडीस पर्वत श्रृंखलाओं में है। यह समुद्री तल से 3,800 मीटर की ऊँचाई पर है। आज भी अमरीका के जंगलों में जंगली आलू की कोई 200 प्रजातियाँ पाई जाती हैं। उस समय के किसानों ने आलू की ऐसी प्रजातियाँ ही चुनीं जो खेती के लिए उपयुक्त थीं। वे पेट भरने के लिए इसी पर निर्भर थे।

आलू यहाँ खूब फला। टिटीकाका झील के पास तो एक हेक्टेयर में 10 टन तक आलू पैदा होता था।

1200 ईस्वीं में इन्का सभ्यता का उदय हुआ। सौ साल से भी कम समय में इन्का अमरीका का सबसे बड़ा राज्य बन गया। इन्कावासियों के लिए मक्का और आलू बहुत महत्वपूर्ण थे। वे आलू को सुखाकर "चूनो" बनाते थे। इसे वे कई-कई सालों तक इस्तेमाल करते थे।

1532 में स्पेन ने इन्का साम्राज्य पर आक्रमण किया। 1572 तक इन्का सभ्यता खत्म हो गई। युद्ध और बीमारियों ने यहाँ की आधी आबादी को खत्म कर दिया। यूरोपीय लोग यहाँ सोने की तलाश में आए थे, लेकिन वे अपने साथ आलू के रूप में कीमती खज़ाना यूरोप ले गए।

तब तक यूरोपियों को आलू के बारे में कुछ भी पता नहीं था। वे तो पत्ता गोभी का सूप और गेहूँ, जौं व सूखे मटर का दलिया ही खाते थे। बार-बार के अकाल के बावजूद उन्हें खाने-पीने की चीज़ों को लेकर कोई खास चिन्ता न थी। 1535 में स्पेन के विजेताओं ने टिटीकाका झील के पास आलू के पौधों को देखा। यूरोपियों ने आलू को कुछ ऐसे देखा, "यह जड़ अण्डे के आकार की है। कुछ जड़ें गोल-सी हैं, कुछ थोड़ी लम्बी। कुछ सफेद, बैंगनी हैं और कुछ पीली। उनकी खुशबू व स्वाद बहुत अच्छा है। लोग इन्हें बड़े ही मज़े से खाते हैं।"

यूरोप में आलू की खेती के शुरुआती प्रमाण 1565 में स्पेन के कैनेरी द्वीप में मिलते हैं। जल्दी ही आलू यूरोप के और भी देशों में भेजा जाने लगा। यहाँ आलू की खेती भी शुरू हो गई। लोगों ने इसे बहुत पसन्द किया। लेकिन 17वीं सदी में स्कॉटलैण्ड के पादरियों ने यह कहकर आलू की खेती पर रोक लगा दी कि बाइबल में आलू के इस्तेमाल का कोई ज़िक्र नहीं है। डॉक्टर यह भी कहने लगे कि इससे कई रोग हो जाते हैं। खैर, इन सबके बावजूद यूरोप में आलू सबकी ज़बान

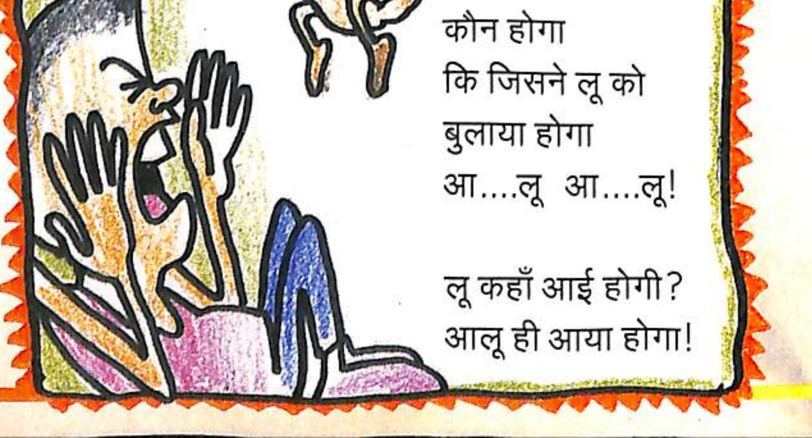

आलू संग्राम

19वीं सदी में हुए बेवेरियन युद्ध को "पोटेटो वॉर" या "आलू संग्राम" नाम से जाना जाता है। ऐसा इसलिए क्योंकि आलू का भण्डार खत्म होते ही यह भी समाप्त हो गया था।

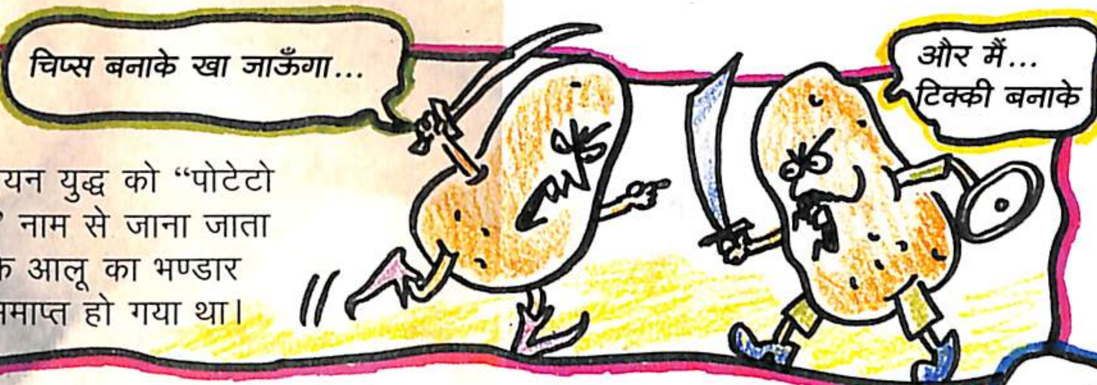

पर चढ़ा ही रहा। यहाँ से दुनिया के अन्य देशों की उसकी सैर शुरू हुई।

यूरोप में आलू को बड़ी तकलीफें हुईं। गर्मियों में यहाँ दिन बहुत लम्बे होते हैं, और सर्दियों में ठीक इसका उल्टा होता है। जबकि एंडीस में साल भर दिन-रात बराबर रहते हैं। आलू को यूरोप के मौसम से दोस्ती करने में करीब डेढ़ सौ साल लग गए।

1770 में पूरे यूरोप महाद्वीप में भयानक अकाल पड़ा। सभी ओर भुखमरी फैली हुई थी। ऐसे में आलू लोगों के लिए वरदान साबित हुआ। वहाँ के किसानों को आलू की खेती करने का आदेश दिया गया। अमरीकी राष्ट्रपति थॉमस जेफरसन ने भी आलू को लोकप्रिय बनाने के लिए व्हाइट हाउस में आने वाले मेहमानों को फ्रेंच फ्राइज़ (तले आलू) परोसना शुरू किया। वर्ष 1815 तक आलू उत्तरी यूरोप व अमेरिका में मुख्य आहार बन चुका था।

पिछले 500 सालों में आलू तेज़ी से दुनियाभर में छा गया है। आज आलू न केवल पूरे अमरीका में उगाया जाता है, बल्कि चीन के ठण्डे प्रदेशों से लेकर भारत के गर्म व नमी वाले इलाकों और उक्रेन के बंजर क्षेत्रों में भी उगाया जाता है।

भारत में आलू

1772 से 1785 के दौरान तत्कालीन ब्रिटिश गवर्नर वॉरेन हेस्टिंग्स ने भारत में आलू की खेती को बढ़ावा दिया। 18वीं सदी के अन्त और 19वीं सदी की शुरुआत के बीच देश के पहाड़ी व मैदानी इलाकों में आलू को पसन्द किया जाने लगा था। इसकी अलग-अलग प्रजातियों को स्थानीय भाषाओं में अलग-अलग नामों से पुकारा जाता था। जैसे मैदानी इलाकों में फूलों की तरह फलने-फूलने की वजह से -फूलवा, गोल आलू को - गोला और 60 दिन में पकने वाले आलू को - साठा आदि।

आलू की प्लेट में आलू की सब्ज़ी

दुनिया भर में जितना भी आलू उगता है उसका आधा हिस्सा तो ताज़ा ही सब्ज़ी वगैरह के रूप में खाया जाता है। बाकी के आलुओं को लम्बे समय तक रखने के कई इन्तज़ाम किए जाते हैं। जैसे आलू के चिप्स, मवेशियों, सुअरों व मुर्गियों का चारा, उद्योगों के लिए स्टार्च, गोंद आदि बनाना। स्टार्च से भरपूर आलू का पाउडर सब्ज़ी के रसे व सूप को गाढ़ा करता है। आलू का स्टार्च दवा, कपड़ा, लकड़ी और कागज़ उद्योगों में भी इस्तेमाल किया जाता है। यह स्टार्च पूरी तरह से नष्ट हो जाता है, इसलिए इसका इस्तेमाल डिस्पोज़ेबल प्लेट आदि बनाने में भी किया जाने लगा है।

शेष पृष्ठ 37 पर...

उफ! ये आदतें तुम्हारी

ज़रा दो-चार दिन रक्खो,
तुम्हें डलिया या आले में
तो तुममें जाने कित्ती बत्तियाँ फूटीं
ज़मीं की आदतें अब तक नहीं छूटीं!

कभी तो चाकू से
बत्ती हटा सब्ज़ी बनाता हूँ
कभी आँगन में बोता हूँ
नए आलू उगाता हूँ

कभी यूँ ही तुम्हें रखके
वो जब मैं भूल जाता हूँ
और हफ्ते बाद तुमको
देखता हूँ, मुस्कुराता हूँ

तुम्हारी बत्तियों को देख
मन में ख्याल उठते हैं
किसी के पेट पे जैसे
कि कुछ नाड़े लटकते हैं

सुशील शुक्ल

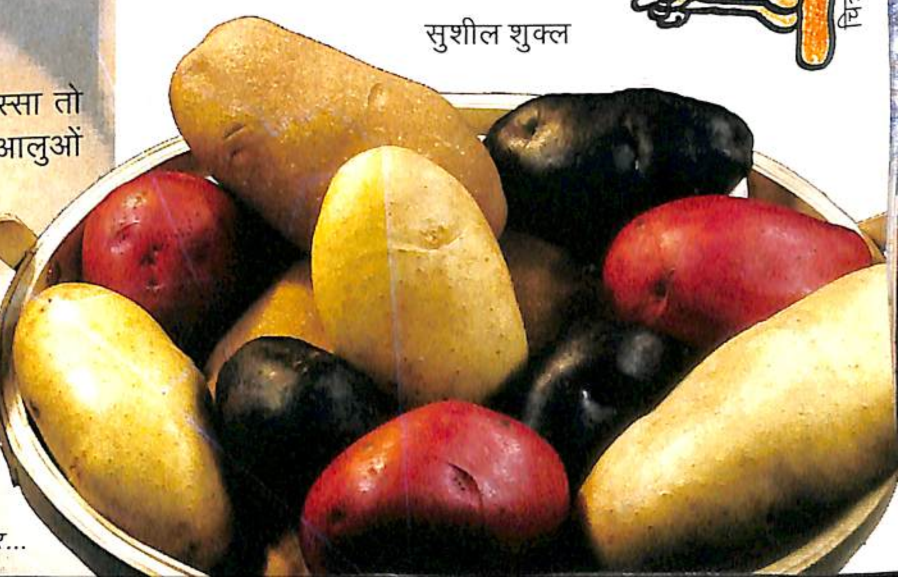

मंज़ूर एहतेशाम

मेरी यादों के रमज़ान

रमज़ान का महीना मुझे कितनी ही यादों से भर देता है। लगता है मैं अपनी बीती ज़िन्दगी को कहीं ऊपर और अलग से देख रहा हूँ। और हैरान हूँ कि ज़िन्दगी इतनी छोटी होने के बावजूद, कैसे शताब्दियों पर फैला-सा, विस्तार रखती है। दिमाग पीछे की ओर दौड़ता है। और एक ऐसे जहान में, ऐसे लोगों के बीच, पहुँचा देता है जिनके होते मुझे हर प्रकार की सुरक्षा का एहसास था। कच्ची दीवारों और कवेलू की छत का मकान। उसका फैला हुआ आँगन। अमरूद के तीन और एक अनार का पेड़। गर्मियों की शाम, सेहन और उसमें बिछे लकड़ी के दो तख्त, और एक बड़ा पत्थर का पटिया। सब खूब पानी बहा-बहाकर ठण्डे किए जा चुके हैं। और दस्तरख्वान पर चुनी इफ्तारी को घेरकर, मैं अब्बा, अम्मा, बड़े भाई साहब, आपा और छोटे भाई के साथ, इफ्तारी की तोप चलने का इन्तज़ार कर रहे हैं। बर्फ, खास तौर पर नर्मदा आइस फैक्ट्री से लाई गई है (भाई साइब साइकिल पर जाकर लाए होंगे)। और आपा ने दूध में रूह अफ्ज़ा मिलाकर शर्बत बनाया है। इफ्तारी के भजिए, पापड़ सब घर में तले गए हैं। बहुत सारा कटा हुआ सुर्ख तरबूज़ भी है।

मैं देखता हूँ, अब्बा की खूबसूरत, काली दाढ़ी को और अम्मा के दुआएँ बुदबुदाते होंठों को। आपा ने दुपट्टा कसकर सिर से बाँधा हुआ है। भाई साहब के चेहरे पर रोज़े की थकान की जगह एक ऐसी मुस्कुराहट है जैसे वे अपने आप से बहुत खुश हों। मैं और छोटा भाई अभी "छोटे" हैं। अभी हमारी रोज़ाखुशाई (रोज़ा रखने की शुरुआत) नहीं हुई है। बाकी सबका रोज़ा है। तोप चलेगी और इफ्तार के बाद सारे रोज़दार मगरिब की नमाज़ में लग जाएँगे। अब्बा और भाई साहब मस्जिद में और अम्मा और आपा घर में। हम दोनों के हिस्से में ढेर सारी इफ्तारी आ जाएगी! नमाज़ के बाद और खाने से पहले अब्बा और अम्मा, दोनों एक-एक पान खाना चाहेंगे क्योंकि दोनों को तम्बाकू की तलब लगी होगी। खाने के दौरान या उसके बाद कोई भी आ सकता है। कोई पर्देवाला हुआ तो आँगन में तने तार पर चादर डालकर ज़नाना-मर्दाना अलग-अलग कर दिया जाएगा। उसके बाद मर्द तराबियाँ पढ़ने मस्जिद चले जाएँगे, जबकि अम्मा और आपा घर में ही तराबियाँ पढ़ लेंगी। अम्मा और आपा रात जल्दी सो जाएँगे।

अलस्सुबह जागकर सेहरी की तैयारी भी तो करना पड़ती है। अब्बा देर रात तक पढ़ेंगे और सेहरी की जाग लगाकर सोएँगे। वैसे तो सेहरी के लिए जगाने वाले मियाँ साब फकीर तो रोज़ आते ही हैं। और क्या खूब आवाज़ में गा-गाकर लोगों को सेहरी के लिए बेदार होने की दावत देते हैं। अम्मा सेहरी और इफ्तारी में उनका भी हिस्सा बनाती हैं। जिसे लेकर वे कितने लहक-लहककर, घर और खानदानवालों को दुआएँ देते हैं।

अगले हफ्ते से ज़कात के पैसे बँटना शुरू हो जाएँगे और अम्मा तरह-तरह के पहचानवाले या अजनबियों से घिर जाएँगी। इब्राहिम दादा के ताँगे में अब्बा हमें मोतीलालजी की दुकान पर साल भर के और ईद के कपड़े दिलाने ले जाएँगे। जूते पहनाने का ज़िम्मा बड़े भाई साहब को सौंप देंगे। ईद के दिन हम अब्बा के साथ टहलते हुए जामा-मस्जिद जाएँगे, क्योंकि ईदगाह का फासला पैदल के हिसाब से ज़्यादा है।

जाने क्यों लगता है रमज़ान में समय की गति धीमी हो जाती थी, और बहुत सारे मुश्किल काम हो जाते थे। शायद यही रमज़ान की बरकत होगी।

जिस समय मेरी रोज़ाखुशाई हुई, मैं चौथी कक्षा में था। मेहमानों में मेरी सहपाठी, नसरीन और राहत भी थीं। जुमे का दिन था। हमारे पड़ोसी साबिर भाई ने मेरा जोड़ा बनाया था और खूबसूरत जूते भी उपहार में दिए थे। जुमे की नमाज़ के लिए अपनी मोटरसाइकिल पर वे मुझे जामा-मस्जिद ले गए थे। और फिर उनके कहे अनुसार, "रोज़ा बहलाने को", भोपाल टॉकीज में फिल्म दिखाई। कुछ बड़े होने पर पता चला वो रियर विण्डो नाम की, अल्फ्रेड हिचकॉक की क्लासिक फिल्म थी। उन्होंने तो मना नहीं किया था मगर फिल्म देखने की बात मैंने घर पर किसी को नहीं बताई थी!

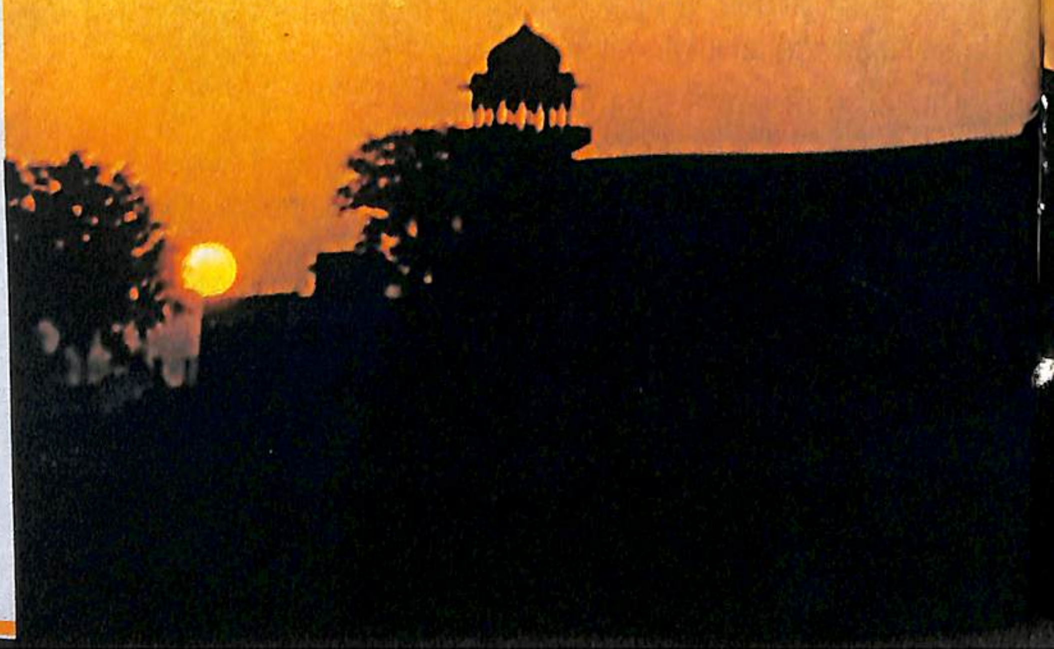

कुछ समय बाद क्लास में, हिन्दी टीचर ने पूछा कि रोज़ा क्यों रखा जाता है। मेरा जवाब था, “ताकि खाते-पीते लोग भी जान सकें कि भूख क्या होती है।” वे इतनी खुश हुईं कि उनसे ऐसा रिश्ता बन गया जो आखिर तक रहा। मुझे मरने के बाद का तो अन्दाज़ा नहीं (हो भी कैसे सकता है?) मगर रमज़ान में लोग कुछ ऐसे हो जाते हैं कि उनका अच्छा-बुरा व्यवहार नमाज़, दुआ और रोज़ा रखने के अनुशासन में खुलकर सामने आ जाता है।

आज ज़माना बदल चुका है। मेरे बचपन के चैन, सुकून और बरकत अब्बा, अम्मा और उस ज़माने के साथ ही रुख्सत हो चुके हैं। आज से चन्द साल पहले तक रमज़ान की रातों में, शहर की गलियों में देर रात तक घूमना, पुराने वक्त और लोगों को याद करना मुझे बहुत अच्छा लगता था। वही मेरी रमज़ान के महीने की इबादत हुआ करती थी। अब भीड़, ट्रैफिक, शोरगुल और शायद बढ़ती उम्र के भी कारण यह इतना आसान और सम्भव नहीं रहा है।

कैसे उम्र बीत गई और कब मैं हरियाली में खेलते बचपन से कंक्रीट में सुरक्षित बुढ़ापे में बदल गया, पता ही नहीं चला। घर के बच्चों को मैं उनके ढंग से, रमज़ान में उत्साहित होते देखता हूँ। और दूर हवा में खो चुकी ट्रेन की आवाज़ कानों में गूँजती है। यह ट्रेन के आने का संकेत है या उसके यहाँ से रवाना होने का, मैं चाहकर भी तय नहीं कर पाता।

बहरहाल, तैयारियाँ जारी हैं। खोपरा घिसा जा रहा है, सूखा मेवा साफ किया, काटा-कुतरा जा रहा है। चन्द दिनों बाद, फिर, उसी उन्तीसा-तीसा के बहस-मुबाहिसे के बाद, चाँद दिखेगा और ईद होगी। सब नए कपड़े पहनकर, शुक्राने की नमाज़ अदा करने, इबादतगाहों की ओर रवाना होंगे...

मुझे और आपको भी यह आने वाली ईद मुबारक हो। मैं सच्चे दिल से दुआ करता हूँ – आमीन!

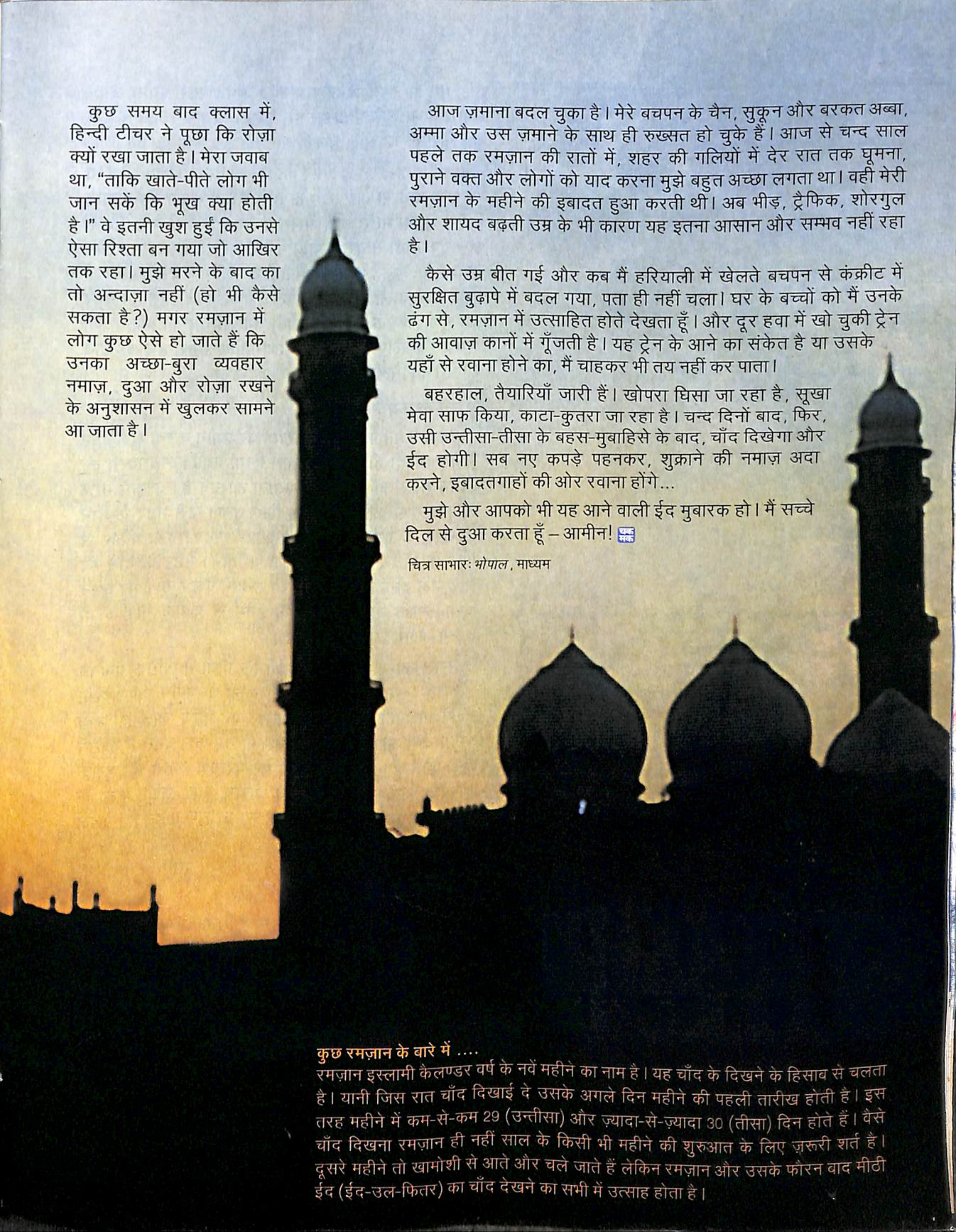

चित्र साभारः *भोपाल*, माध्यम

कुछ रमज़ान के वारे में ....

रमज़ान इस्लामी कैलण्डर वर्ष के नवें महीने का नाम है। यह चाँद के दिखने के हिसाब से चलता है। यानी जिस रात चाँद दिखाई दे उसके अगले दिन महीने की पहली तारीख होती है। इस तरह महीने में कम-से-कम 29 (उन्तीसा) और ज़्यादा-से-ज़्यादा 30 (तीसा) दिन होते हैं। वैसे चाँद दिखना रमज़ान ही नहीं साल के किसी भी महीने की शुरुआत के लिए ज़रूरी शर्त है। दूसरे महीने तो खामोशी से आते और चले जाते हैं लेकिन रमज़ान और उसके फौरन बाद मीठी ईद (ईद-उल-फितर) का चाँद देखने का सभी में उत्साह होता है।

सुशील जोशी

मटर के दानों की करामात

विज्ञान में व्यवस्थित प्रयोग करके आँकड़े इकट्ठे करने का महत्व बार-बार नज़र आता है। कई बार लोग सोचते हैं कि वैज्ञानिक खोजें चमत्कार के रूप में होती हैं, संयोगवश हो जाती हैं। हो सकता है कि ऐसा भी होता हो मगर विज्ञान की अधिकांश खोजें धैर्यपूर्वक किए गए अध्ययन का नतीजा होती हैं। विज्ञान में संयोग की बात हम फिर कभी करेंगे। इस बार ऐसे प्रयोगों की बात करेंगे जो सालों-साल तक चले थे और जिनके बल पर जीव विज्ञान के कुछ महत्वपूर्ण सिद्धान्त खोजे गए थे। इन प्रयोगों और इनके निष्कर्षों ने विज्ञान की एक नई शाखा को जन्म दिया था। मैं बात कर रहा हूँ जिनेटिक्स यानी अनुवांशिकी की।

मेंडल, मटर और अनुवांशिकी

वैसे धैर्यपूर्वक अध्ययन करके दूरगामी व बुनियादी निष्कर्षों पर पहुँचने के मामले में डारविन का कोई सानी नहीं है मगर मेंडल (1822-1884) भी पीछे नहीं हैं। मेंडल ऑस्ट्रिया के निवासी थे और उनका पूरा नाम था ग्रेगर जॉन मेंडल। मेंडल एक मठ में रहते थे और उन्होंने अपने सारे प्रयोग अपने बगीचे में मटर के पौधों पर ही किए। ये प्रयोग 1856 में शुरू हुए और पूरे 12 साल चले।

तुमने तरह-तरह के मटर के दाने तो देखे ही होंगे। ऐसे ही मटर के पौधे भी कई तरह के होते हैं। तो मेंडल यह जानना चाहते थे कि मटर के ये अलग-अलग गुण कैसे पैदा होते हैं और एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में कैसे पहुँचते हैं। वैसे तो लोग सदियों से जानते थे कि एक पीढ़ी के कई गुण दूसरी पीढ़ी तो क्या, आने वाली कई पीढ़ियों तक प्रकट होते रहते हैं। मगर इन गुणों के एक से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचने की प्रक्रिया को समझने के लिए मेंडल ने जो प्रयोग किए उनसे हमें कई बातें सीखने को मिली थीं।

मेंडल के प्रयोग

मेंडल ने पहले तो मधुमक्खियों पर प्रयोग करना शुरू किए लेकिन जल्दी ही मटर को थाम लिया क्योंकि मधुमक्खी की बजाय मटर को सम्भालना ज़्यादा आसान है। उन्होंने मटर के कुछ गुणों को अध्ययन के लिए चुना। जैसे मटर के दाने दो तरह के होते हैं – चिकने और खुरदरे। इसी प्रकार से मटर के पौधे लम्बे हो सकते हैं या बौने। मटर के दाने हरे और पीले दोनों हो सकते हैं। तो उन्होंने ऐसे 7 गुणों पर ध्यान दिया। मुख्य बात यह थी कि इनमें से प्रत्येक गुण के दो अलग-अलग रूप पाए जाते थे।

मेंडल को यह तो पता ही था कि पौधों में लैंगिक प्रजनन होता है – यानी किसी पौधे के फूलों के पराग कण किसी दूसरे पौधे के फूलों के स्त्रीकेसर पर पहुँच जाते हैं। यहाँ पराग कण और अंडाशय के मेल से नए फल बनते हैं जिनमें बीज होते हैं। इस क्रिया को पर-परागण कहते हैं। इसके विपरीत यदि किसी फूल के पराग कण उसी फूल के स्त्रीकेसर पर पहुँच जाएँ तो इसे स्व-परागण कहते हैं। मेंडल ने अपने प्रयोग के लिए एक खास व्यवस्था की। वे किसी प्रयोग में पर-परागण होने देते थे तो किसी प्रयोग में मात्र स्व-परागण की अनुमति देते थे।

हर बार जब बीज बनते तो उन्हें गिना जाता। फिर उनमें से कुछ बीज गिनकर बोए जाते। इनसे बनने वाले पौधों के गुणों का लेखा-जोखा रखा जाता। फिर इनसे बनने वाले बीज गिने जाते, उन्हें फिर से बोया जाता और उनमें पाए जाने वाले गुणों का रिकॉर्ड रखा जाता। यानी मेंडल के पास बीज-बीज का हिसाब था।

मटर का फूल – बैंगनी कब, सफेद कब?

यह प्रयोग सम्बन्धित था फूलों के रंग से। मटर के कुछ पौधों में बैंगनी फूल लगते हैं और कुछ में सफेद। तो सबसे पहले मटर के दानों को बोया और उनमें स्व-परागण

करवाया गया। हर बार फूलों के रंग के आधार पर उन्हें छाँट लिया गया। ऐसा इतनी बार करवाया कि जो बीज बने उन्हें बोकर स्व-परागण करवाने पर सारे पौधों पर या तो बैंगनी फूल आएँ या सफेद। दूसरे शब्दों में, मेंडल ने स्व-परागण करवा-करवा कर सच्चे बैंगनी और सच्चे सफेद फूल वाले पौधे तैयार कर लिए थे। सच्चे बैंगनी और सच्चे सफेद से मतलब है कि उनमें स्व-परागण कराया जाए तो उसी रंग के फूल वाले पौधे मिलेंगे। इसी में दो-तीन साल लग गए होंगे।

इसके बाद उन्होंने दोनों तरह के बीज बोए और उनमें पर-परागण करवाया। इस तरह से जो बीज बने उन्हें बोने पर जो पौधे बने उन सब में बैंगनी फूल लगे। आखिर क्यों? बीच का रंग क्यों नहीं बन गया?

अब जब इन बैंगनी फूलों वाले पौधों में पर-परागण से उत्पन्न बीज बोए गए तो... तुम्हारा क्या ख्याल है क्या होगा? मेंडल के प्रयोग में हुआ यह कि सारे पौधों में बैंगनी फूल नहीं लगे। मेंडल ने गिना कि 705 पौधों पर बैंगनी फूल लगे थे और 224 पौधों पर सफेद फूल लगे थे। अनुपात के रूप में कहें तो बैंगनी और सफेद फूल वाले पौधों के बीच अनुपात 3.15:1 था।

उन्होंने ये प्रयोग अन्य गुणों को लेकर भी किए। उनके परिणाम तालिका में देख सकते हो। सभी में विपरीत गुणों का अनुपात लगभग 3:1 था। ऐसा क्यों?

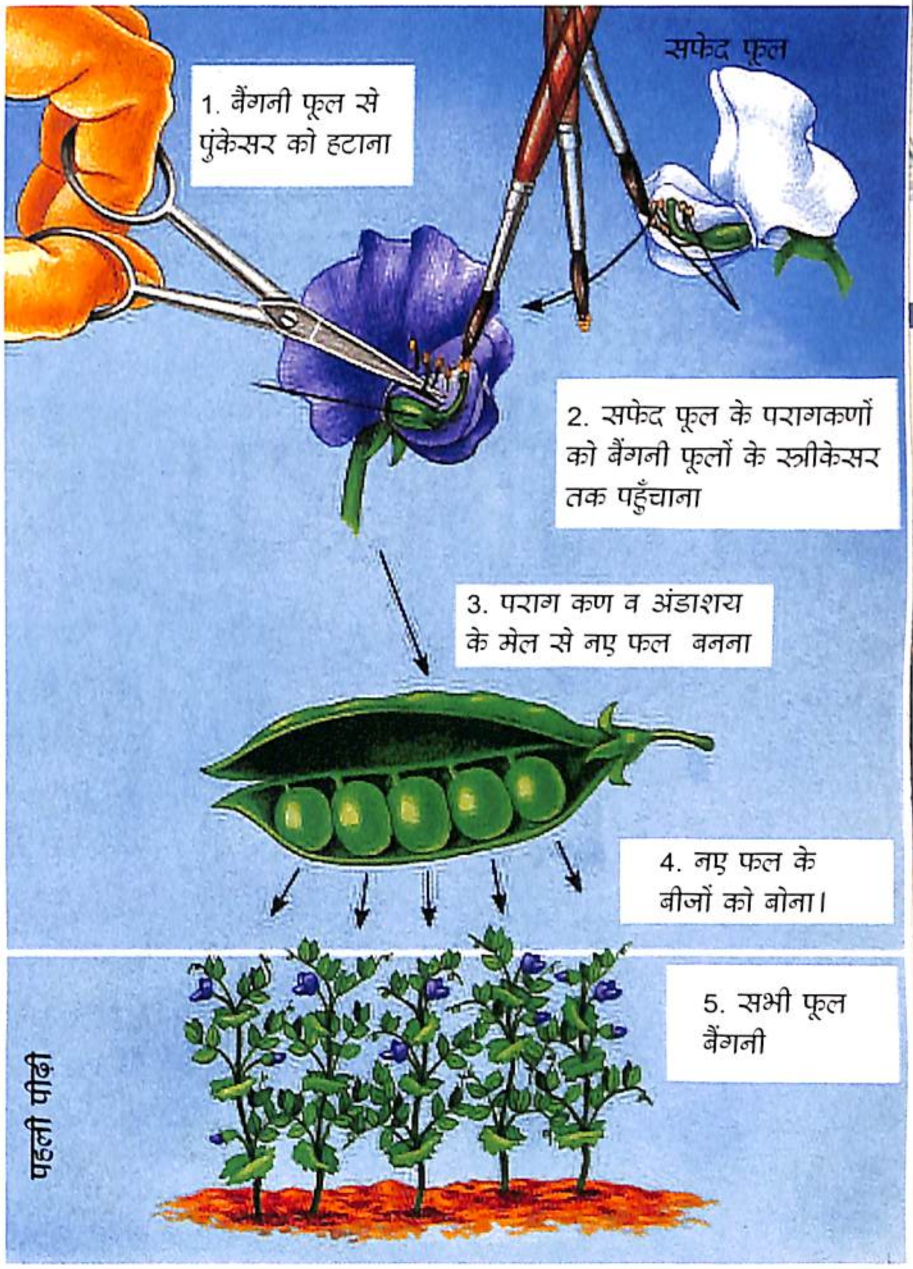

तालिकाः मेंडल के परिणाम

गुण	प्रथम पीढ़ी	दूसरी पीढ़ी	अनुपात
चिकने या खुरदरे बीज	सारे चिकने	5,474 चिकने, 1850 खुरदरे	2.96:1
पीले या हरे बीज	सारे पीले	6,022 पीले, 2001 हरे	3.01:1
लाल या सफेद फूल	सारे लाल	705 लाल, 224 सफेद	3.15:1
फूली हुई या पिचकी हुई फली	सारी फूली हुई	882 फूली, 299 पिचकी	2.95:1
हरी या पीली फलियाँ	सारी हरी	428 हरी, 152 पीली	2.82:1
कक्षस्थ या अग्रस्थ फूल	सारे कक्षस्थ	651 कक्षस्थ, 207 अग्रस्थ	3.14:1
लम्बा या छोटा तना	सारे लम्बे	787 लम्बे, 277 छोटे	2.84:1

शेष पृष्ठ 36 पर...

भ्रमर गोस्वामी

डरी चींटियाँ

वे दोनों नन्हीं चींटियाँ बहनें थीं।
पहली बार घर के बाहर निकली थीं।
थोड़ी दूर जाते ही वे दोनों ठिठक गईं।
यह देखकर एक पिल्ला भी रुक गया।
घबड़ाहट में उसकी दुम ज़ोर से हिलने लगी।
उसकी दुम पर एक मक्खी बैठी थी।
वह उड़कर पेड़ के पत्ते पर जा बैठी।
पिल्ले के पीछे एक कुत्ता था।
उसने पूछा, "आगे खतरा है क्या?"
पिल्ला कुछ कह नहीं पाया।
उधर से एक बिल्ली आ रही थी।
कुत्ते को देखकर वह पेड़ पर चढ़ गई।
मक्खी उड़कर उसके सिर पर बैठ गई।
वहीं बैठे टिड्डे ने पूछा, "बिल्ली रानी, वे सब क्या देख रहे हैं?"
बिल्ली बोली, "कुत्ते से पूछो।"
टिड्डा कुत्ते के पास गया। कुत्ते ने कहा, "पिल्ले से पूछो!"
पिल्ले ने कहा, "चींटियों से पूछो।"
एक चींटी बोली, "देखो सामने कितना बड़ा पहाड़ है।"
तभी वह पहाड़ हिला। फिर चलने लगा।
सबने देखा वह एक हाथी था।

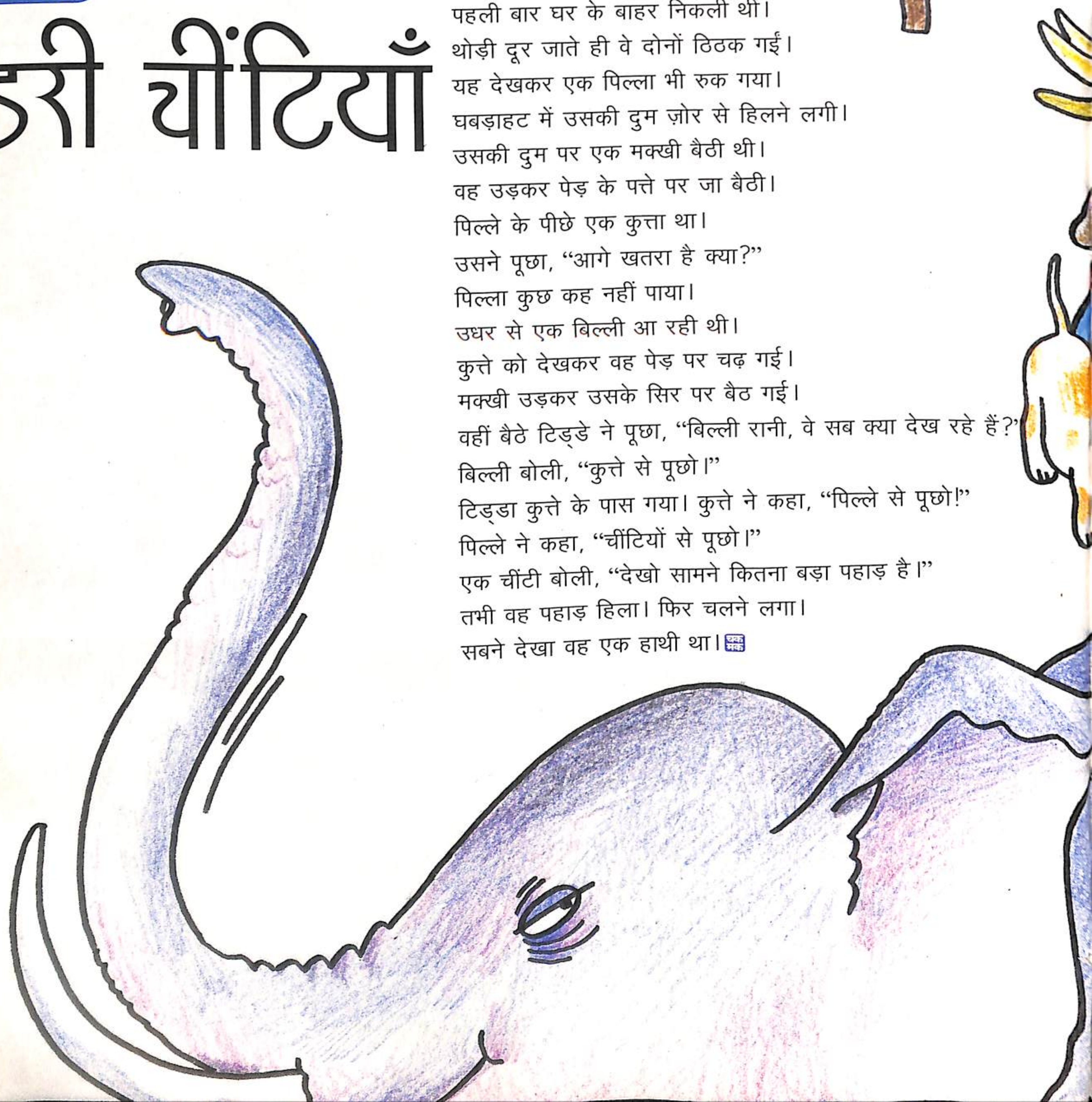

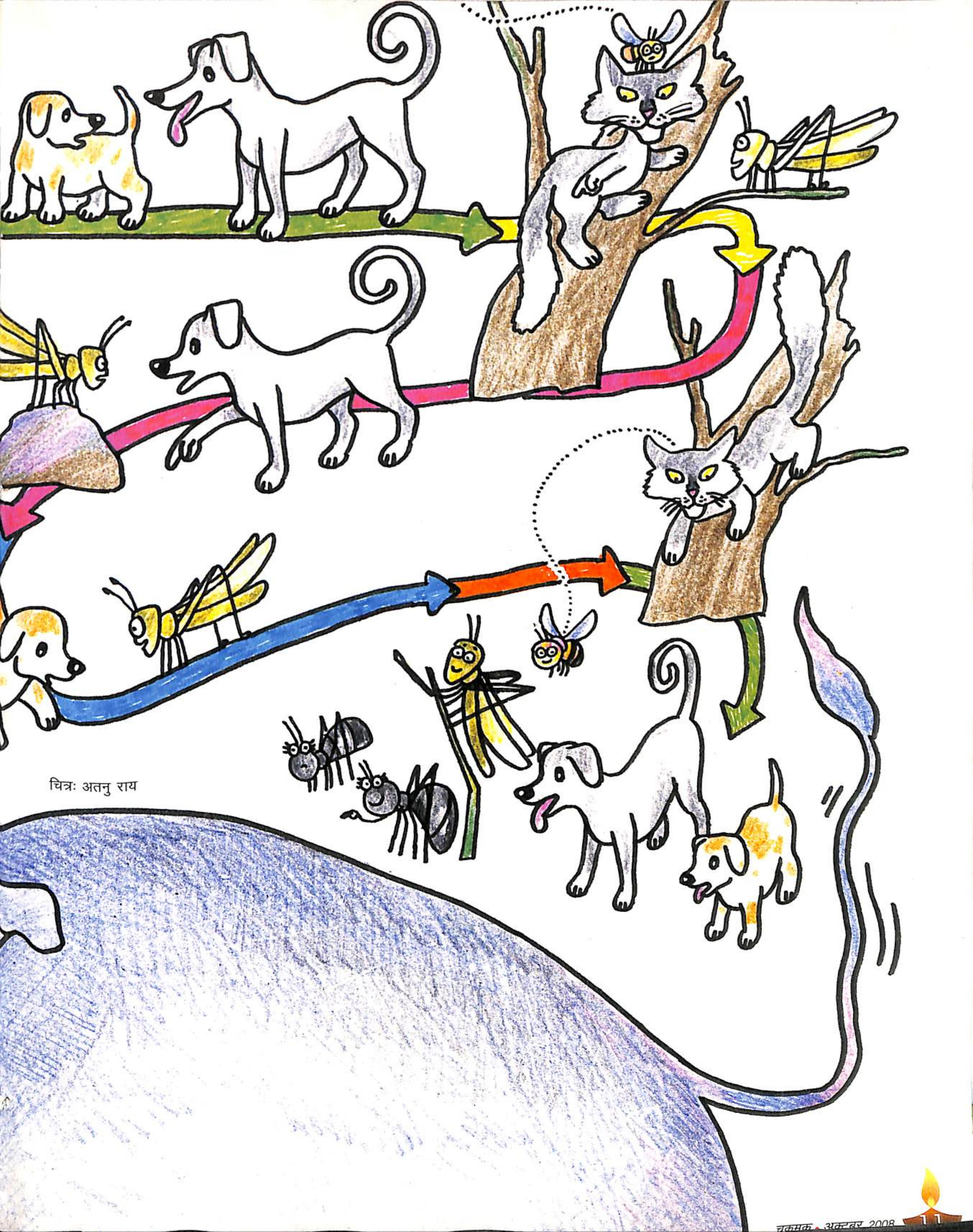

चित्रः अतनु राय

शम्पा शाह

पाबूजी की पड़

एक अनूठा चलचित्र

ज़रा गर्मियों के वो दिन तो याद करो जब रोज़ रात को एक-डेढ घण्टे के लिए बिजली गुल हो जाती थी – कूलर, पंखा, टी.वी. सब बन्द। पढ़ना-लिखना, सारे कामकाज ठप्प। करो तो क्या? खैर, दो-चार दिनों में सबने वक्त बिताने का अपना-अपना तरीका खोज लिया। आधा मोहल्ला उस समय सड़क पर टहलता नज़र आता। मोमबत्ती की रोशनी या फिर चाँदनी रात में छत या बगीचे में खाना होता। फिर किस्से-कहानियों का दौर चल पड़ता। और जो कभी भूतों के किस्से निकल पड़े तो उस मज़े का कहना ही क्या। कई घरों में उस समय पूजा होने लगती। आरती करते हुए उजाले का एक छोटा-सा घेरा घूमता, पल भर के लिए कोई मूरत दिखती और फिर उसके पीछे भागती उसकी परछाईं नज़र आती। अँधेरे में ऊपर-नीचे जाता दिया देवताओं में जैसे जान फूँक देता। यह तो थी शहरों की बात लेकिन हमारे देश के अधिकतर गाँवों में तो बिजली हमेशा ही गुल रहती है। सूरज डूबते ही अँधेरे में डूब जाने वाले हमारे गाँवों ने अपने मनोरंजन के कई तरीके सोचे। हमारे सिनेमा को आए तो अभी कुल जमा सौ बरस ही हुए हैं लेकिन उन्होंने अपनी तरह का चलचित्र यानी सिनेमा कई सौ बरस पहले बना लिया था। और हाँ, ये चलचित्र शुरू से ही रंगीन हैं। इसमें बाकायदा नायक, नायिका, खलनायक तथा अन्य पात्र होते हैं। अलग-अलग समय और जगहों पर घटी घटनाएँ होती हैं। संवाद, नाच-गाना होता है। एक और खास बात कि इन चलचित्रों की रील एक से दूसरे मोहल्ले या गाँव में ले जाई और दिखाई जा सकती है। यह रील कागज़ या कपड़े का लम्बा चित्रों भरा पट्टा होता है। जिसे बाँस पर लपेटकर रखा जाता है। इन चलचित्रों को पट-चित्र, नक्काशी-पटम्, जादू पटिया, चित्रकथी, थाप, पड़ या फड़ आदि नामों से जाना जाता है। यहाँ हम फड़ को देखते हैं।

पड़ या फड़ यानी क्या?

राजस्थान के गाँव-कस्बों में पड़ या फड़ का सिनेमा खूब चलता है। भील-भोपा जाति के लोग इन्हें दिखाते हैं। पड़ यानी कपड़े पर बना कई हाथ लम्बा-चौड़ा चित्र। एक हाथ यानी कोहनी से बीच की उँगली के ठेठ छोर तक की लम्बाई जो लगभग डेढ़ फुट होती है। लेकिन हाथ किसी बच्चे का नहीं बल्कि बड़े का होना चाहिए।

पड़-चित्रों के हीरो अक्सर लोक-नायक होते हैं। लोगों के मन में इन वीर, नेक नायकों के लिए बेहद प्यार और विश्वास है। इतना कि वे इन्हें देवता मानते हैं। कोई इच्छा पूरी हुई हो या पूरी करानी हो तो लोग इन्हीं के पास जाते हैं।

शेष पृष्ठ 24 पर...

राजस्थान के नागौर ज़िले के लाम्बा गाँव में पड़ पढ़ते नारायणजी और उनके बेटे। नारायणजी यहाँ *दियाला* - दिया हाथ में रखने वाले - की भूमिका में हैं। आमतौर पर यह काम भोपी करती है।

स्वयंप्रकाश

प्यारे भाई रामसहाय,

एक दिन मुझे साथ लेकर नानी जी हमारे पड़ोसी सुधाकर काका को देखने गईं जो बीमार थे। वे अस्पताल में भर्ती थे। अस्पताल जाने का यह मेरा पहला अवसर था।

एक बड़े से वार्ड में कई एक जैसे पलंग लाइन से लगे हुए थे। सब पर एक जैसी सफेद चादर और लाल कम्बल। सफेद दीवारें, ऊँची छत, खिड़कियों पर हरे परदे और फर्श एकदम चमकता हुआ। एक पलंग पर सुधाकर काका लेटे हुए थे। एकदम पास पहुँचने पर दिखाई दिया।

हमें देखकर सुधाकर काका जैसे खुश हो गए। नानीजी ने उनके सिर पर हाथ फेरा और उनके सिरहाने खड़ी हो गईं। और हालचाल पूछने लगीं।

अस्पताल का माहौल मुझे बहुत ही अच्छा लग रहा था। बड़ी-बड़ी खिड़कियों के पार हरे-हरे पेड़ झूम रहे थे। न ट्रैफिक का शोरगुल, न धूल, न मच्छर-मक्खी....। सिर्फ लोगों के धीरे-धीरे बातचीत करने की धीमी-धीमी गुनगुन। बाकी एकदम शान्ति।

तभी सफेद कपड़ों में एक नर्स आई। नर्स ने नानीजी को देखकर अभिवादन में सिर हिलाया और काका को दवा खिलाई। नानी जी काका के लिए साबूदाने की खीर बनाकर लाई थीं। नर्स से पूछा कि खिला दूँ क्या? नर्स के हाँ कहने पर उसके जाने के बाद नानी जी ने चम्मच से धीरे-धीरे काका को साबूदाने की खीर खिलाई। काका ने बहुत स्वाद लेकर खीर खाई।

क्या ठाठ हैं बीमारों के भी। मैंने सोचा.... ठाठ से साफ-सुथरे बिस्तर पर लेटे रहो और साबूदाने की खीर खाते रहो ! काश ! सुधाकर काका की जगह मैं होता! मैं कब बीमार पड़ूँगा

कुछ रोज़ बाद एक दिन मेरा स्कूल जाने का मन नहीं किया। मैंने होमवर्क भी नहीं किया था। स्कूल जाता तो ज़रूर सज़ा मिलती। मैंने सोचा बीमार पड़ने के लिए आज का दिन बिल्कुल ठीक रहेगा। चलो बीमार पड़ जाते हैं।

मैं रज़ाई से निकला ही नहीं। नानी जी उठाने आईं तो मैंने कहा, "मैं आज बीमार हूँ।"

"क्या हो गया?"

"मेरे सिर में दर्द हो रहा है। पेट भी दुख रहा है और मुझे बुखार भी है।"

नानी जी चली गईं।

मैं रज़ाई में पड़ा-पड़ा घर में चल रही गतिविधियों का अनुमान लगाता रहा। अब छोटे मामा नहाकर निकले। अब कुसुम मौसी रोज़ की तरह नाश्ता छोड़कर कॉलेज बस पकड़ने भागीं। अब मुन्नू अपना जूता ढूँढ रहा है। अब छोटे मामा ने साइकिल उठाई। अब सब चले गए। अब घर में मैं अकेला रह गया।

पता नहीं कब झपकी-सी आ गई।

तभी फ़र्श पर पैर घसीटते नाना जी आए। "क्या हो गया? क्या हो गया?"

"बुखार आ गया।" मैंने कराहते हुए कहा।

"देखें!" नानाजी ने रज़ाई हटाकर मेरा माथा छुआ। पेट देखा और नब्ज़ देखने लगे।

इस बीच नानी जी भी आ गईं। "क्या हुआ?" नानी जी ने पूछा।

"बुखार तो नहीं है।" नाना जी बोले।

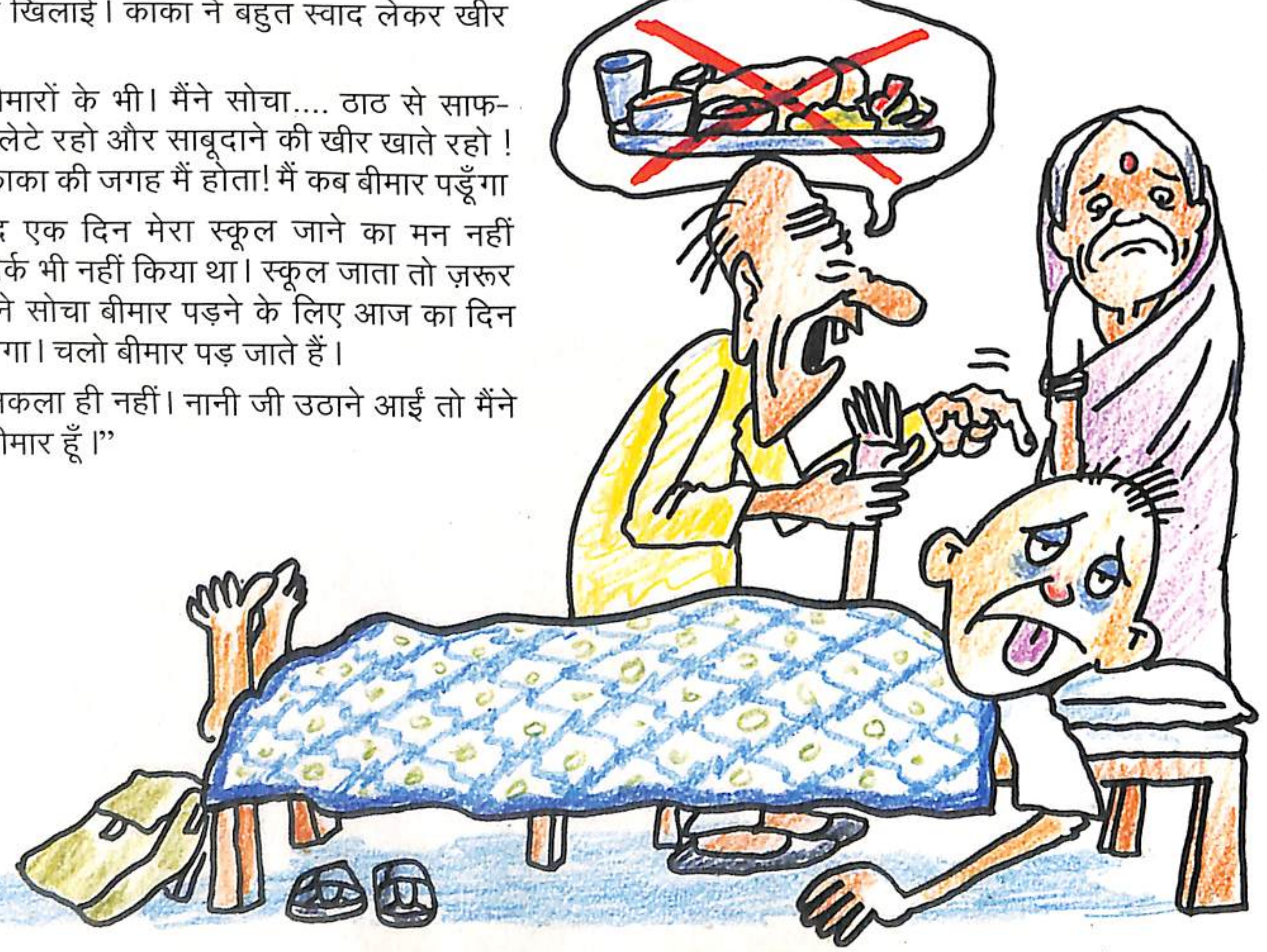

"आपको पता नहीं चल रहा। थर्मामीटर लगाकर देखिए।" मैंने कहा।

मुझे पता था घर में कोई है नहीं। थर्मामीटर लगा भी लिया तो देखेगा कौन? नानाजी को दिखाई देता नहीं, नानी जी को देखना आता नहीं। वैसे थर्मामीटर मुँह में लेते ही उसे ज़ोर से चबा लेने की इच्छा होती है। पर खुद को बीमार साबित करने के लिए यह चाल अच्छी थी। बहुत ढूँढा गया पर थर्मामीटर मिला ही नहीं। शायद कोई माँगकर ले गया था।

फिर नानाजी की आवाज़ आई, "ले, पुड़िया खा ले।" न चाहते हुए भी मुझे कड़वी पुड़िया खाना पड़ी और काढ़े जैसी चाय पीना पड़ी। फिर नानाजी बोले, "आज इसे कुछ खाने को मत देना। आराम करने दो। शाम को देखेंगे।"

दोनों चले गए।

मैं पता नहीं कब नींद में गुडुप हो गया।

कुछ देर बाद जब मेरी आँख खुली मुझे बड़ी तेज़ इच्छा हुई कि इसी समय बाहर निकलकर दिन की रोशनी में अपनी गली की चहल-पहल देखूँ। देखा जाए कि चन्दूभाई ड्राइक्लीनर क्या कर रहे हैं? तेजराम नाई की दुकान पर कितने ग्राहक बैठे हैं? महेश घी सेन्टर ने सड़ी मलाई का भगोना आँच पर चढ़ाया या नहीं और टेलीफोन के तारों पर कितनी चिड़ियाँ बैठी हैं? लेकिन मजबूरी थी। चाहे जितनी ऊब हो, लेटे ही रहना था।

कुछ देर इधर-उधर की, स्कूल की, दोस्तों की बातें सोचता रहा.... फिर लेटे-लेटे पीठ दुखने लगी तो उठकर बैठ गया। लेकिन बाहर कुछ आहट होते ही फिर से लेट गया।

नानाजी आए। बोले, "अब कैसा है सिरदर्द? मैंने कहा, "ठीक है।" फिर भी एक पुड़िया और खिला गए

अचानक मुझे भूख-सी लगी। फल या साबूदाने की खीर मिलने की उम्मीद की तो सुबह ही हत्या हो चुकी थी। अब नानीजी से जाकर कहूँ कि भूख लग रही है तो वे क्या करेंगी? ज़्यादा से ज़्यादा यही कि दूध पी ले। या नाना जी से पूछने चली जाएँगी – वो कह रहा है भूख लगी है। और फिर नाना जी क्या कहेंगे? वही जो सुबह कह रहे थे – तबीयत ढीली हो तो सबसे अच्छा उपाय है भूखे रहना। इससे सारे विकार निकल जाएँगे।

क्या मुसीबत है! पड़े रहो! आखिर कब तक कोई पड़ा रह सकता है? इससे तो स्कूल चला जाता तो ही ठीक रहता। सज़ा मिलती तो मिल जाती। कितना मज़ा आता जब रिसेस में ठेले पर जाकर नमक मिर्च लगे अमरूद खाते कटर-कटर ।

फिर झपकी लग गई।

लेकिन भूख के कारण ठीक से नींद भी नहीं आ रही थी। और आँख ज़रा लगती भी तो खाने ही खाने की चीज़ें दिखाई देतीं। गरमागरम खस्ता कचौड़ी... मावे की बर्फी... बेसन की चिक्की... गोलगप्पे। और सबसे ऊपर साबूदाने की खीर! पता नहीं क्यों साबूदाने की खीर सिर्फ उपवास और बीमारी में ही बनाई जाती है। जैसे गुझिया सिर्फ होली-दीवाली और पंजीरी सिर्फ पूर्णिमा के दिन ही बनाई जाती है। क्यों? क्या ये चीज़ें जब इच्छा हो तब नहीं बनाई जा सकतीं। कोई मना करता है?

हे भगवान! यह तो अच्छी खासी बोरियत हो गई। पूरा दिन कोई कैसे लेटा रहे? और शाम को...। क्या शाम को भी नानाजी बाहर जाने देंगे? सारे बच्चे हल्ला मचाते हुए आँगन में खेल रहे होंगे और मैं बिस्तर में पड़ा झख मार रहा होउँगा। साले अकलमन्द! और बनो बीमार। और आज दिया गया होमवर्क? किससे कॉपी माँगोगे? मैं रुआँसा हो गया।

पास के कमरे में होती खटर-पटर से अन्दाज़ा हुआ कि मुन्नू स्कूल से आ गया है। तो क्या एक बज गया? अब बरतनों की आवाज़ आ रही है। शायद सब लोग खाना खाने बैठ रहे हैं। मुन्नू एक बार भी मुझे देखने नहीं आया। आया भी होगा तो दबे पाँव आया होगा और मुझे सोता जान लौट गया होगा।

... वो खाना खा रहे हैं। चबाने की आवाज़ें आ रही हैं। देखो। उन्होंने एक बार भी आकर नहीं पूछा कि तू क्या खाएगा? पूछते तो मैं साबूदाने की खीर ही तो माँगता। कोई ताजमहल तो नहीं माँग लेता। लेकिन नहीं। भूखे रहो !! इससे सारे विकार निकल जाएँगे। विकार निकल जाएँ बस। चाहे इस चक्र में तुम खुद शिकार हो जाओ।

...आज क्या खाना बना होगा? खुशबू तो दाल-चावल की आ रही है। अरहर की दाल में हींग-ज़ीरे का बघार और ऊपर से बारीक कटा हरा धनियाँ और आधा चम्मच देसी घी। फिर उसमें उन्होंने नीबू निचोड़ा होगा। थोड़ा-सा इस बीमार को भी दे दे कोई।

....लेकिन खुशबू तो किसी और चीज़ की है। क्या हरी मिर्च तली गई है? उसे दाल चावल में मसलकर खा रहे हैं।

जब रहा नहीं गया तो मैं रज़ाई फेंककर खड़ा हो गया। दबे पाँव दरवाज़े तक गया और चुपके से झाँककर देखा।

हाँ, दाल-चावल, तली हुई हरी मिर्च।

लेकिन मुन्नू आम चूस रहा था। आम! इस मौसम में? ज़रूर बम्बई वाले चाचाजी ने भेजें होंगे। कैसे चूस रहा है। पूरी गुठली मुँह में ठूँसे। जैसे आम कभी देखे न हों। नदीदा! भुक्कड़ कहीं का। पूरा हाथ भी सान रहा है।

मैं जलन, गुस्से और कुढ़न में पाँव पटकता वापस बिस्तर में आ गया। उस पूरे दिन मुझे भूखे पेट ही रहना पड़ा। सारे विकार निकल गए।

इसके बाद स्कूल से छुट्टी मारने के लिए मैंने बीमारी का बहाना कभी नहीं बनाया।

एक आदमी ने न्यूटन के कोट के एक छेद की तरफ इशारा करते हुए कहा, "न्यूटन साहब, इस छेद से आपकी गरीबी बाहर झाँक रही है।"

"जी नहीं, आपकी मूर्खता अन्दर प्रवेश कर रही है।" न्यूटन बोले।

राजेन्द्र गायकवाड़

उड़ने वाला साँप

बात 1972 की है। साँप की है और भुखमरी भुगत रहे बनवारी लाल की भी है।

उन दिनों साँप के बारे में कई किंवदन्तियाँ प्रचलित थीं। जैसे साँप के सिर पर मणि होती है। मणि खो जाने पर साँप अन्धा हो जाता है। उड़ने वाले साँप की छाँव पड़ने से आदमी को लकवा हो जाता है। या साँप की केंचुली को किताब में रखने से परीक्षा में अच्छे नम्बर आते हैं, वगैरह। खैर! कहानी के सिरे को हम दूसरी तरफ से पकड़ते हैं।

हमारे कस्बे के बेहद दिलचस्प और बातूनी आदमी थे बनवारी लाल। वे अपनी नौकरी छोड़ चुके थे। बनवारी रेलवे में ड्राइवर थे। उन्हें डर था कि एक दिन उनकी मालगाड़ी का एक्सीडेंट होगा और वे मारे जाएँगे। यह डर इतना बढ़ गया कि उन्होंने नौकरी छोड़ दी। परिवार में सात लोग थे और कमाई का कोई साधन नहीं था। बनवारी लाल की ज़िन्दगी में भुखमरी और दुर्दशा के दिन शुरू हो गए थे।

एक दिन सुबह-सबेरे हमारे कस्बे में एक "अफवाह" फैली कि पास के एक खेत की बाम्बी में एक साँप मिला है जो उड़कर वापिस अपनी जगह आ जाता है। वो आदमी की बोली बोलता है और गायब हो जाता है। यह बात दूधवालों के ज़रिए पूरे कस्बे में फैली, जो सुबह-सुबह आया करते थे।

दिन चढ़ते ही उस जगह अच्छा खासा मजमा लगने लगा। नारियल, फूल, कपूर और अगरबत्ती की दुकानें सजने लगीं, स्थानीय भजन मण्डलियाँ अपनी फ्री सेवाएँ देने लगीं। कड़ाहों में प्रसाद बनने लगा। लोग जी-खोलकर दान-दक्षिणा देने लगे। प्रिंटिंग प्रेस वाले भी पर्चे छपवाकर बाँटने लगे। पर्चे में

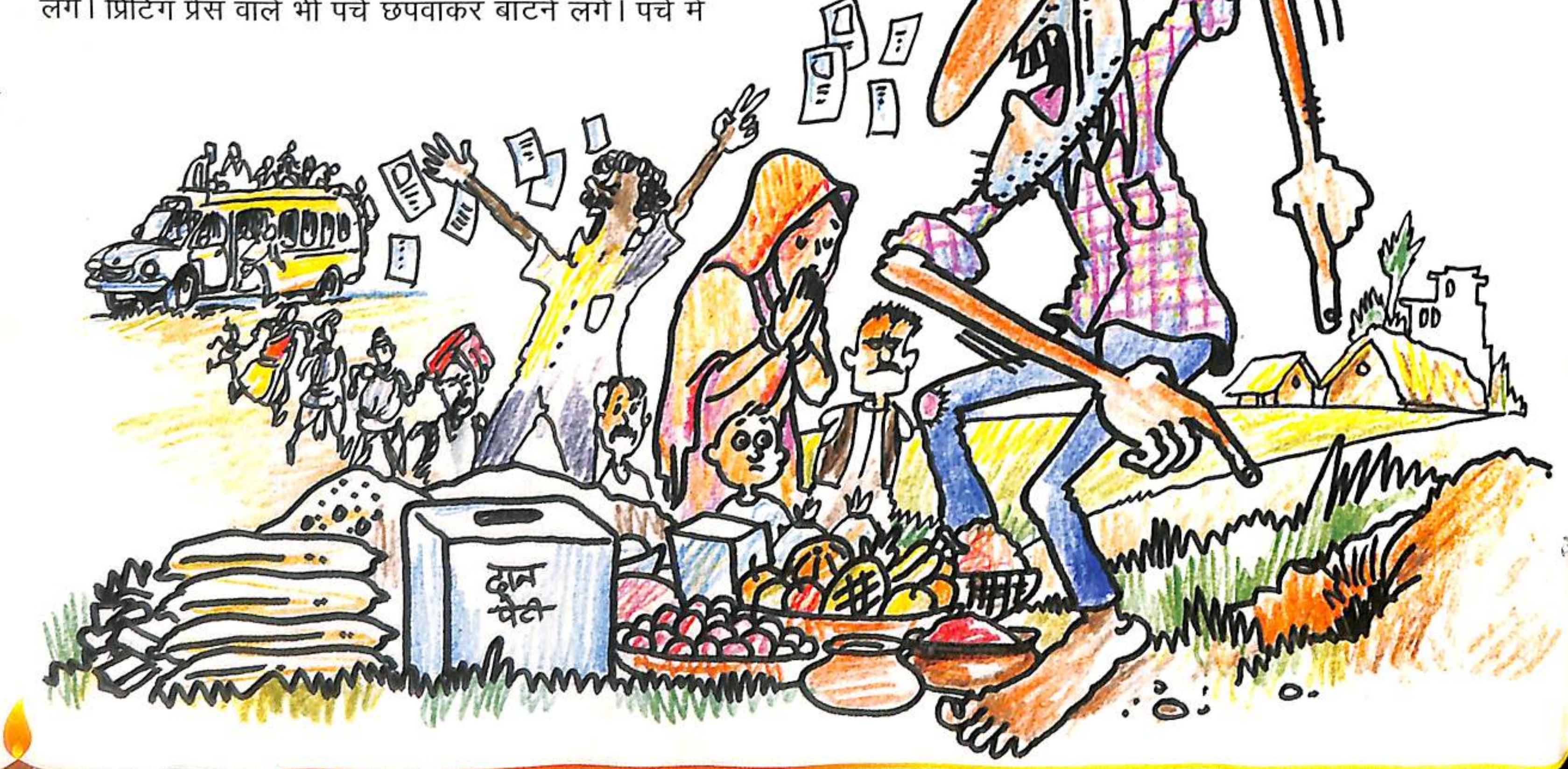

लिखा होता, "अमुक आदमी को नागदेवता ने सपने में दर्शन दिए। उस आदमी ने 500 पर्चे छपवाकर बँटवाए। एक आदमी ने पर्चे को फाड़कर पैरों से रौंद दिया तो उसके घर में आग लग गई। दो दिन में उसकी पत्नी मर गई.... आप भी 500 पर्चे छपवाकर लोगों के बीच बँटवाएँ आपको धनलाभ होगा।" पर्चे के नीचे प्रिंटिंग-प्रेस का नाम भी लिखा होता।

उड़ने वाले सर्पदेवता की चर्चा चार-पाँच दिनों तक गर्माती रही। लोग तरह-तरह की बातें कहते, जिनमें दिव्यशक्ति और चमत्कार का ज़िक्र होता। कस्बे का व्यापारी-वर्ग भी भला क्यों पीछे होता। वे भी दिल खोलकर दान-चढ़ावा देने लगे। दूर-दूर से लोग इस चमत्कार को देखने और भक्तिरस में डूबने के लिए आने लगे। स्थानीय बसें इस जगह खाली हो जातीं। बसें तभी लौटतीं जब सब लोग "दर्शन" करके वापिस आ जाते। लेकिन हफ्ते दस दिन में यह आग ठण्डी और मन्द पड़ने लगी।

मन्दिर बनवाने के लिए दान में मिला सीमेन्ट, रेत, ईंट, गिट्टी और लोहा गायब होने लगा। वहाँ रखी दान पेटी भी एक रात जाने कौन उठा ले गया। उड़ने वाले साँप की बात आई गई हो गई और लोग धीरे-धीरे इस बात को भूलकर और अपने काम-काज में लग गए।

हुआ कुछ इस तरह कि भीड़-भाड़ और धुएँ-धुन्ध की घुटन साँप बर्दाश्त नहीं कर पाया और बाम्बी के अन्दर ही मर गया।

बहुत दिनों बाद जो रहस्य बनवारी लाल ने पिताजी को बताया वो इस तरह था – बड़े बाबू, दुनिया जिस तरह की है, उसे उसी तरह से हाँकना होता है। सात-सात लोगों को पालना-पोसना था। ज़हर तो दे नहीं सकता था न! मैं भी इंसान हूँ और इंसान की कमज़ोरी और हरकतें जानता हूँ।

मैंने एक सपेरे से दस रुपए में केंचुलधारी साँप खरीदा और उसे दीमक की बाम्बी के पास रख दिया। सुबह-सुबह जब दूधवाले वहाँ से गुज़रने लगे तो मैंने उनको साँप दिखाते हुए कहा कि ये उड़नेवाले नाग देवता हैं। इनने सपने में मुझसे कहा कि मैं तुम्हें यहाँ मिलूँगा। इनने अभी कुछ देर पहले मेरे से अच्छी-खासी बातें कीं। ये संसार के पालनहार हैं। इनकी सेवा करो और जाओ सबको बताओ।

बड़े बाबू "दस पैसे" के साँप से मैंने दुनिया को चराया है।

एक बार एक अखबार ने गलती से रुड्यार्ड किपलिंग (*जंगल बुक* के लेखक) की मौत का समाचार छाप दिया। किपलिंग अखबार को देख अचरज में पड़ गए। कुछ देर सोचकर उन्होंने अखबार के सम्पादक को पत्र लिखाः

क्योंकि आपको हर बात की सही खबर रहती है, इसलिए मेरी मौत का समाचार भी सच ही होगा। मेरी प्रार्थना है कि अपने अखबार की ग्राहक सूची से मेरा नाम हटा दें।

प्रमोद-मीनाक्षी

मेहा का सपना

मेहा अक्सर सुबह नींद से उठते ही कमरे में इधर-उधर कुछ ढूँढने लगती। कभी अपनी माँ से पूछती, "मम्मा वो कहाँ है?" माँ को उसकी बात कुछ समझ नहीं आती। वो उससे कहती, "लगता है तूने सपना देखा है!" और उसे गले लगा लेती।

एक सुबह मेहा जब नींद से उठी तो बारिश हो रही थी। उठते ही उसकी नज़र सामने मेज़ पर रखी किसी चीज़ पर पड़ी। वह भागती हुई अपीन माँ के पास गई और खुशी से चिल्लाई, "मम्मा! सपना, मम्मा! सपना!" माँ कुछ समझ नहीं पाई। मेहा उँगली पकड़कर माँ को कमरे में लाई और मेज़ पर रखा छाता दिखाते हुए फिर से बोली, "देखो मम्मा! सपना!"

चित्रः कनक

योह भी खूब रही

हरियाणवी हास्य कथा

सुखदेव मल्होत्रा

मोधर गाम की बात सै। भल्ले राम गाम में कुँए पे नहाण गया होया था। चाणचक उस की बालटी हाथ ते छूट गी अर जा गिरी कुँए के बीच।

बालटी ढूँढण की घणी कोसिस करी गई। कई दिनाँ लग ढूँढते-ढूँढते हम सारे हलकान हो लिए थे। पर के कहवाँ, ओ बालटी न मिली। इसे में हम के करदे?

चाणचक, एक दिन अपणे गुसाईं जी उड़े कुएँ धोरे आज पहुँचे। म्हाँ ने देख के न्यूँ कहण लागे, "क्यूँ भई, न मिली ओ बालटी?"

तंद लटकू ने नाड़ हिला के कहया, "न मिली, के कराँ।"

"जरूर-प-जरूर पड़ौसी गाम आड़े-ई लेगे होएँगे। जगदीस की गाय बी बोए खोलके लेगे थे। रूलदू के खेताँ में ते न्यार बी बोए काटके लेगे थे न? के-के गिणाऊँ? म्हारे गाम की सगरी चोरी की चीजाँ उसे गाम में पाया करेंहैं।" गुसाई ने कह्या था।

सुणले ई रामधन बोल्या, "पण ताऊ, न्यू ले बता, कुएँ में पड़ी बालटी ओ क्यूँ कर लेगे होवेंगे?"

गुसाईं जी ने सटाक दे सी जवाब देते होये कहया, "उण लोगाँ के लिए यो कोए मुसकले काम सै? ओ मरे बटे धणेई चालबाज सैं। लेगे हॉएँगे धरती के तले-तले ते ई।"

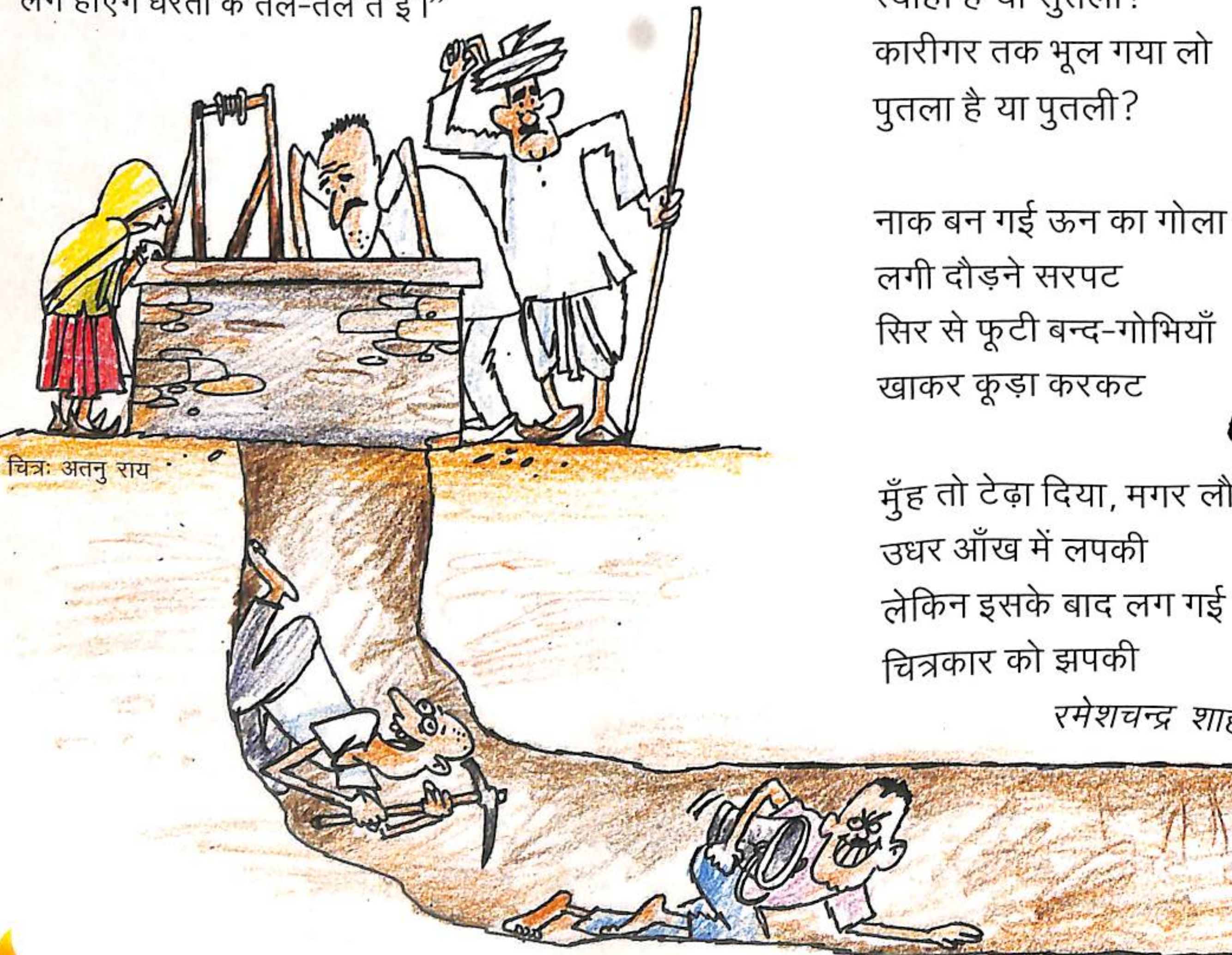

चित्रः अतनु राय

अभी ढूँढें झाड़ी

एक दो दस
तीतर की छूटी बस
अब जाएँ कैसे
इस गाँव में से
जंगल बड़ी दूर
थक के होगा चूर
कल पकड़ेंगे गाड़ी
अभी तो ढूँढे झाड़ी

प्रभात

बुनते-बुनते

इसे बनाना कहें कि बुनना
स्याही है या सुतली?
कारीगर तक भूल गया लो
पुतला है या पुतली?

नाक बन गई ऊन का गोला
लगी दौड़ने सरपट
सिर से फूटी बन्द-गोभियाँ
खाकर कूड़ा करकट

मुँह तो टेढ़ा दिया, मगर लौ
उधर आँख में लपकी
लेकिन इसके बाद लग गई
चित्रकार को झपकी

रमेशचन्द्र शाह

ये सब नीलकण्ठ की तस्वीरें हैं। नीलकण्ठ यानी वह जिसका कण्ठ या गला नीला हो। पर यहाँ सभी नीलकण्ठ सचमुच में नीलकण्ठ नहीं हैं। हमारे यहाँ पाए जाने वाले नीलकण्ठ (इण्डियन रोलर) का गला नीला नहीं होता है। इन्हें अकसर बिजली के तारों पर या पेड़ों पर देखा जा सकता है।

नीले गले वाले नीलकण्ठ को कश्मीर रोलर या यूरोपियन रोलर कहा जाता है। ये पश्चिमी भारत में दशहरे के आसपास लगभग दो महीनों के लिए प्रवास करते हैं। शायद यह प्रवासी नीलकण्ठ ही है जिसे दशहरे पर देखना अच्छा माना जाता है। इस दिन इसे देखते हुए यह गीत भी गुनगुनाया जाता है....

नीलकण्ठ तुम नीले रहियो
दूध-भात को भोजन करियो
हमरी खबर भगवान से कहियो

नीलकण्ठ तुम नीले रहियो

फोटोः पी. एम. लाड

कागज़ की सीटी

1. पोस्टकार्ड के आकार का पतला कागज़ लो। और बीच से मोड़कर खोल लो।
2. चित्र को देखकर खाई व पहाड़ी मोड़ बना लो। कुछ इस तरह की आकृति बनेगी।
3. अब बीच वाले के मोड़ के लगभग बीचोंबीच एक गोला बना लो और कैंची की मदद से उसे काट लो।
4. लो हो गई कागज़ की सीटी तैयार। बस अब देर किस बात की है सीटी उठाओ और शुरू हो जाओ।

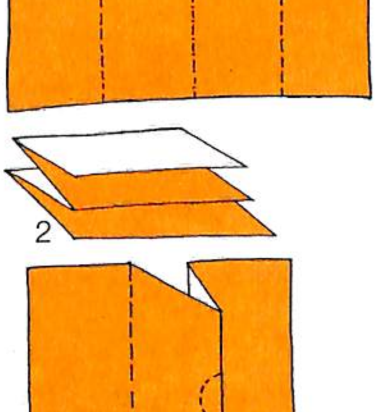

चित्रः जितेन्द्र ठाकुर

सतीनाथ षडंगी

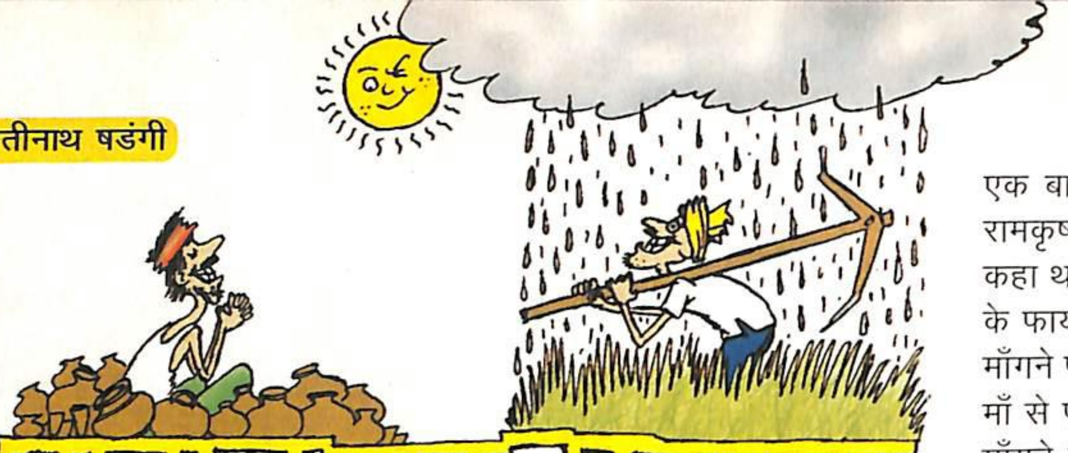

भगवान का सवाल

यह तब की बात है जब मैं छोटा था और भगवान की बड़ी इज़्ज़त करता था। मेरे मन में एक सवाल आया कि अगर एक गाँव के कुम्हार भगवान से विनती करें कि पानी दो-तीन दिन और न बरसे। ताकि उनके कच्चे घड़े सूख जाएँ, भट्टी में पक जाएँ। और अगर उसी गाँव के किसान लोग भगवान से यह मनाएँ कि जल्दी से बारिश हो जाए ताकि उनकी फसल अच्छी हो तो भगवान जी क्या करेंगे?

मैंने यह सवाल अपने कई साथियों से पूछा। कइयों ने कहा कि भगवान ऐसी बारिश कर देंगे कि किसान के खेत में पानी पड़े पर कुम्हार के घड़े सूखे के सूखे रहें। मैंने यह तो देखा था कि सड़क के इस पार बारिश हो रही है और उस पार नहीं। पर ऐसा बहुत कम समय के लिए होता है। इतने में तो कुम्हारों के घड़े सूखने से रहे।

कइयों ने कहा कि भगवान ऐसी बातों पर ध्यान देने लगे तो फिर वे और कुछ कर ही नहीं पाएँगे। कुछ दोस्तों ने तो यह भी कहा कि जो ज़्यादा चढ़ावा चढ़ाएँगे या ज़्यादा प्रार्थना करेंगे बारिश का फैसला उन्हीं के पक्ष में जाएगा। पर यह भी मुझे जँचा नहीं, क्योंकि जिस भगवान की मैं इज़्ज़त करता था वे इतने टुच्चे नहीं हो सकते थे कि जिधर दो पेड़े ज़्यादा हुए उधर की माँग पूरी कर दी।

धीरे-धीरे मेरे मन में भगवान के बारे में और भी सवाल कुलबुलाने लगे। एक सवाल बड़ी ज़ोर से आया कि अगर भगवान ने इंसानों को बनाया तो साथ-साथ दाँत का दर्द क्यों दे दिया, मच्छर क्यों पैदा किए और सारे विटामिन कड़वी चीज़ों में क्यों डाल दिए?

बचपन में माँ ने स्वामी विवेकानन्द के बारे में किताब से पढ़कर एक कहानी सुनाई थी। उस कहानी की एक बात मुझे लग गई। वह यह कि रामकृष्ण परमहंस ने विवेकानन्द से कहा था कि सच्चे दिल से और दूसरों के फायदे के लिए भगवान से कुछ भी माँगने पर प्रार्थना पूरी हो जाती है। मैंने माँ से पूछा, "कुछ भी मिल सकता है, माँगने पर?" माँ ने कहा, "हाँ, बशर्ते वह अपने फायदे के लिए न हो और सच्चे दिल से माँगा जाए।" इसके बाद मैं पूरी तरह से जुट गया। सच्चे दिल का मतलब मैंने यह लगाया कि जिस वक्त पूजाघर में भगवान के सामने प्रार्थना करें उस समय और कुछ न सोचें। शुरू-शुरू में यह मुश्किल था। मैं दिल सच्चा करने पर जितना ज़ोर लगाता उतना ही दूसरी बातें – दोस्ती-दुश्मनी की, स्कूल-घर की, खेल के मैदान की, पतंग लूटने और कँचे हारने की – मेरे मन में आ जातीं। पर मैंने इसका तोड़ निकाल लिया। मैं पहले देर तक भगवान के चित्र को देखता रहता फिर आँख बन्द किए हुए उसी चित्र पर खासकर भगवान के चेहरे पर ध्यान टिकाए रहता।

हर दिन मैं तीन चीज़ों के बारे में प्रार्थना करता था जो मेरे मन को सबसे ज़्यादा हिला रही थीं।

उन दिनों हर दिन अखबार में और रेडियो पर समाचार आता था कि अमरीकी सेना वियतनाम के लोगों पर जुल्म ढा रही है। हमारे पास-पड़ोस में लोग बातें करते थे इसके बारे में। इसके अलावा उसी दौरान दुनिया के दूसरे हिस्सों में भी कई जगह लड़ाई-झगड़े हो रहे थे। मेरी पहली प्रार्थना थी कि हे भगवान! आप चाहो तो सब कुछ कर सकते हैं सो ऐसा कुछ करो कि दुनिया में लड़ाई-झगड़े ना हों। लोग एक दूसरे का खून न बहाएँ, एक दूसरे

को तकलीफ न दें।

मैं नहीं जानता था कि यह प्रार्थना पूरी करना भगवान के लिए कितना मुश्किल है। हाँ अहसास था कि काफी मुश्किल होगा। पर मुझे माँ की बातों पर भरोसा था कि भगवान मुश्किल से मुश्किल सवाल को भी हल कर सकते हैं।

मेरी दूसरी प्रार्थना थी कि स्कूल जाते वक्त सड़क किनारे जिन बच्चों को मैं हर दिन देखता था, वे भूखे न रहें। उस समय मुझे लगता था कि यह तो भगवान चुटकी बजाते कर देंगे। बाद में जब मैंने पूरी दुनिया का व्यापार इन बच्चों को भूखा सुलाने के लिए चलता देखा, तब जाकर मैं समझा कि यह प्रार्थना भी पहली वाली जैसी मुश्किल है।

भगवान से मेरी तीसरी प्रार्थना यह थी कि मेरा बड़ा भाई जो उस समय बहुत ज़्यादा शराब पी रहा था, पीना बन्द कर दे। यह सवाल भी कोई मेरे फायदे के लिए नहीं था। मैं यह नहीं जानता था कि शराब में खराबी क्या है, लेकिन मुझे मालूम था कि बड़े भाई के शराब पीने से माँ कितनी दुखी होती है। यह प्रार्थना मैं अपनी माँ के लिए कर रहा था।

मैं इन तीन प्रार्थनाओं को हर रोज़ सवेरे, सच्चे दिल से भगवान के पास पहुँचाने में लग गया। कई दिन बीत गए। मैं धीरज धरे रहा। हफ्ते बीत गए, फिर महीने बीत गए। साल भर होने को आया। मैंने इन तीनों बातों में कोई फर्क नहीं देखा। उलटे हालात और भी बदतर होते देखे तो मेरा मन डोलने लगा।

हालाँकि मैं माँ से भगवान के बारे में कहानियाँ सुनता रहा पर सिर्फ मज़े के लिए। भगवान पर मेरा विश्वास उठने-उठने को था। मैं मानने लग गया था कि या तो भगवान में सब कुछ करने की ताकत नहीं है या उनके पास इतना

हालाँकि मैं माँ से भगवान के बारे में कहानियाँ सुनता रहा पर सिर्फ मज़े के लिए। भगवान पर मेरा विश्वास उठने-उठने को था।

वक्त नहीं है कि वे नौ साल के बच्चे के तीन दरख्वास्त सुन लें। फिर मैंने सोचा मेरी बला से और प्रार्थना करनी बन्द कर दी।

भगवान से मोहभंग होने के बावजूद मेरे मन में भगवान के बारे में सवाल आते रहे। मेरी माँ जब इन सवालों से तंग हो जाती तो मुझे यह कहकर चुप करा देती कि भगवान के बारे में ऐसे-वैसे सवाल नहीं करते।

पर भगवान के बारे में सवाल मैं आज भी पूछता फिरता हूँ। जैसे मैं बच्चों से पूछता हूँ, "भगवान कहाँ रहते हैं?" वे आसमान की तरफ उँगली दिखाते हैं, "ऊपर।"

"फिर वे गिरते क्यों नहीं?"

वे कहते हैं, "जादू से।" मैं कहता हूँ, "ठीक है, भगवान तो जादू से उड़ते रहते हैं पर जब वे टट्टी करते हैं तो वह हमारे ऊपर क्यों नहीं गिरती?" टट्टी में जादू रहने की बात मानने वाले वास्तव में उनमें से हैं जो मानते हैं कि भगवान भूतों की तरह पत्थरों, पेड़ों और जानवरों में तो रहते ही हैं, हमारी सोच और मन में भी हैं। अब यह एक बात है जिसको झुठलाना मुश्किल है।

जो दिखते नहीं, जिसे छू नहीं सकते, जो जगह नहीं घेरते, जो चाहें तो अपना वज़न शून्य कर लें ऐसे भगवान हर जगह नहीं हैं यह मैं किस दावे से कह सकता हूँ?

जो कण-कण में भगवान होना मानते हैं उन लोगों के लिए मेरे मन में यह सवाल आता है कि वे बिना शरमाए गुसलखाने में कपड़े कैसे उतारते होंगे। बाद में भले ही आदत पड़ जाए पर शुरू-शुरू में तो गुसलखाने में ठहरे भगवान से शर्म आती होगी!

तो इस तरह भगवान के बारे में मेरे मन में सवालों का उगना जारी रहता है। मैं जानता हूँ कि तुम्हारे मन में भी भगवान और भूत के बारे में बहुत सारे सवाल होंगे। मेरी मानो तो इन अवैज्ञानिक सवालों को भी चकमक में भेजो। और हाँ मेरे आध्यात्मिक सवालों के जवाब भी तुम्हारे पास हों तो ज़रूर भेजना।

मेरा पन्ना

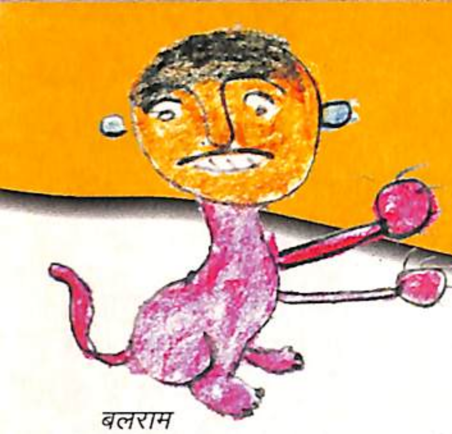

बलराम

अभिनव गुप्ता

आगे क्या हुआ होगा...

एक था शेर और एक बैल। उनकी बहुत पक्की दोस्ती थी। लेकिन शेर बैल से चिढ़ता था। एक दिन शेर और बैल वन घूमने गए। तभी एक गाय का बछड़ा शेर के आगे आ गया। तो शेर उस बछड़े पर बारह फिट दूर से झपटा। बछड़ा डर के मारे गिर गया। तो वह बछड़े के पास पहुँचा और उसको सूँघने लगा। तो वह बैल बोला शेर से - भाई शेरसिंह यह तो मेरा भाई है, उसको तुम मत मारो।

अब बताओ आगे क्या हुआ होगा....

चित्र व कहानी: दीपक कुमार, पाँचवीं

मेरे पास सिर्फ पाँच रुपए थे...

प्रीति, पता नहीं लिखा

एक दिन जब मैं मेले जा रही थी तो मुझे रास्ते में एक बच्चा दिखाई दिया जो भीख माँग रहा था। उसने मुझसे बोला कि मुझे कुछ पैसे दे दो या कुछ खाने को दे दो। मेरे पास सिर्फ पाँच रुपए थे। मैंने सोचा कि यदि ये पैसे मैं इस बच्चे को दे दूँगी तो मेले कैसे घूमूँगी पर मुझे लगा कि इस बच्चे को इन पैसों की ज़्यादा ज़रूरत है इसलिए दो रुपए उस बच्चे को दे दिए और बचे हुए तीन रुपए लेकर मैं मेले की तरफ चल दी।

नाम, पता नहीं लिखा

एक घर था

एक घर था। उस घर में एक बूढ़ा आदमी रहता था। उसके घर के सामने एक तालाब था। एक दिन बूढ़े आदमी ने सोचा कि वह एक पालतू जानवर रखे जैसे गाय, कुत्ता, भैंस और तोता। वह सोच में पड़ गया कि वह कौन-सा पालतू जानवर पाले तो उसने सोचा कि वह तोता रखे। फिर वह एक तोते की दुकान में गया उसने दुकानदार से कहा कि उसे एक तोता चाहिए। दुकानदार ने उसे एक तोता दिया। फिर बूढ़े आदमी ने दुकानदार से पूछा कि इस तोते को मैं कहाँ रखूँगा। दुकानदार ने उत्तर दिया कि इसको पिंजरे में रखना। फिर बूढ़ा एक पिंजरे की दुकान में गया। उसने दुकानदार से कहा - दुकानदार भैया, क्या आप मुझे एक पिंजरा देंगे। दुकानदार वाले ने उत्तर दिया - हाँ, मैं अभी लाता हूँ। फिर दुकानदार ने बूढ़े आदमी को एक पिंजरा दे दिया। फिर बूढ़े आदमी ने तोते को पिंजरे में रखा। बूढ़ा आदमी और तोता एक साथ रहने लगे।

रितिका रतनानी, तीसरी, दुर्ग, छत्तीसगढ़

ओसामा खुर्शीद, आठवीं, नई दिल्ली

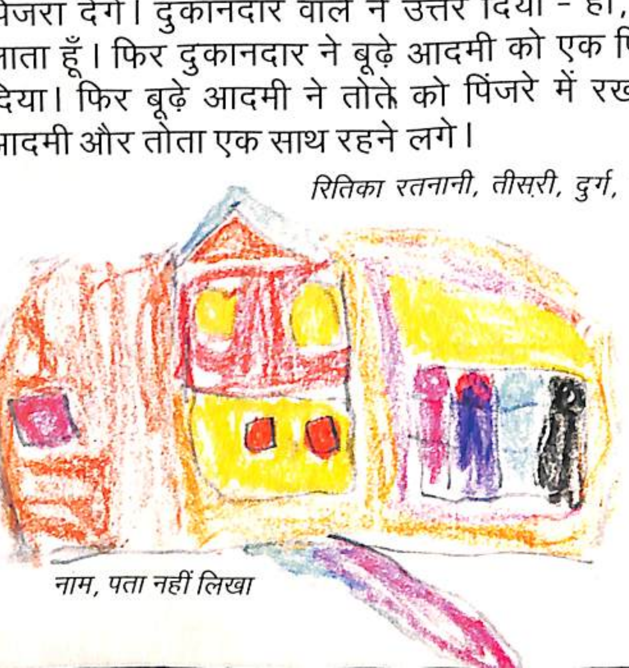

नाम, पता नहीं लिखा

करन धनेजा, भोपाल

चिकन बिरयानी

मुझे सबसे ज़्यादा बिरयानी चिकन पसन्द है क्योंकि बिरयानी की खुशबू सबसे अलग है इसलिए मुझे बिरयानी पसन्द है और चिकन इसलिए पसन्द क्योंकि चिकन मुर्गे का बनता है। मैं चिकन बिरयानी सबसे ज़्यादा पसन्द करता हूँ।

इरशाद अली, चौथी, मथुरा, उत्तर प्रदेश

अभिनव गुप्ता, सात वर्ष, इलाहाबाद

एक किश्ती

एक आदमी किश्ती में बैठकर समुद्र की सैर कर रहा था। फिर उसने एक व्हेल का आगे वाला बुग्गा अपनी ओर आता देखा। उसने इतना तेज़ चप्पू चलाया ... इतना तेज़ चप्पू चलाया कि उसके बाल उड़ रहे थे... उसकी कमीज़ उड़ रही थी और उसकी किश्ती उड़ रही थी।

चित्र व कहानी: अस्सू व कुनी, धर्मशाला, हिमाचल प्रदेश

पुराना किला

पुराने किले में मेरे दादा काम करते हैं? और वह नदी बीस फुट गहरी है। वहाँ हम अपने मम्मी-पापा के साथ मछली पकड़ने जाते हैं। और वहाँ हम सब नाव में घूमते हैं। वहाँ किनारे पे जाते है तो हमें वहाँ से अपना चिड़ियाघर दिखता है। और मेरा भैरों मन्दिर भी दिखता है। और आरटीओ भी दिखता है इसलिए तो हमें पुराना किला पसन्द है।

नरसिंह, मथुरा, उत्तर प्रदेश

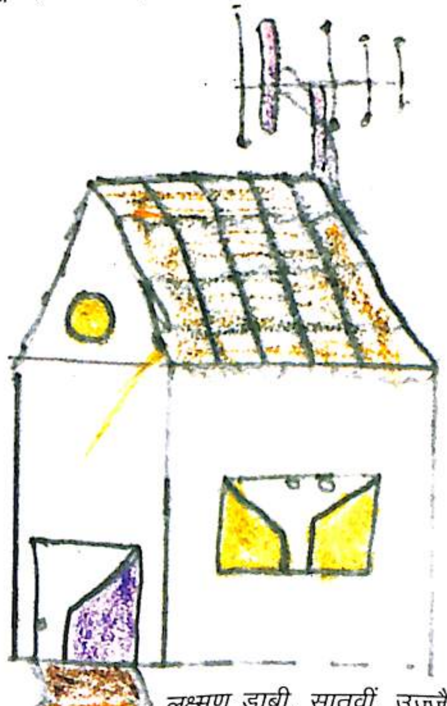

लक्ष्मण डाबी, सातवीं, उज्जैन, मध्य प्रदेश

ताज़ा खबर

कनिष्क कुमार, कानपुर, उप्र

आज के दिन शास्त्री नगर के विशाल मैदान में रावण का दहन किया गया। रावण को तीन भागों में विभाजित किया गया। हनुमानज़ी ने गदा मारी तो रावण की धोती खुल गई। छह तीर लगने से उसके दसों मुँह ज़मीन पर गिर गए। दूसरी तरफ राम भगवान का तीर व रावण का गदा युद्ध चल रहा था। वहाँ की आतिशबाजी अच्छी थी। रावण को टाइम बम से उड़ाया गया था। वहाँ पर अनेक विधायकों का स्वागत किया गया। महापौर आदि भी आए थे।

रिपोर्टर - शुभम परमार, सातवीं, उज्जैन, मध्य प्रदेश

शेर से लड़ते पाबूजी।

पृष्ठ 12 का बाकी हिस्सा

पड़ में वैसे तो कई किस्से बनते हैं पर लोगों का सबसे ज़्यादा भरोसा पाबूजी, देवनारायण और रामदेव पीर पर है। और इनमें भी पाबूजी की पड़ तो समझो लोगों के बीच पिछले 800 सालों से सुपर-हिट है। 3.5 फुट चौड़ी और 18 इंच लम्बी पाबूजी की पड़ में कुल 172 घटनाएँ हैं।

आज हमारे घर पड़ है

किसी का ऊँट बीमार हो या घर का कोई सदस्य, किसी ने ऊँट, भेड़ें खरीदी हों या ज़मीन लोग भोपों को पाबूजी या देवनारायण आदि की पड़ बाँचने के लिए बुला लेते हैं। सारे गाँववालों को खबर कर दी जाती है कि आज रात अमुक जगह पर, अमुक पड़ सुनाई जाने वाली है। बस फिर क्या, दिन भर के अपने काम-काज निपटाकर लोग वहाँ रात भर ठहरने की तैयारी से इकट्ठे हो जाते हैं। भोपा पड़ को बाँस और रस्सी से पर्दे की तरह तान देता है। भोपा और भोपी (उसकी पत्नी) मिलकर कहानी कहना शुरू करते हैं – एक लाइन भोपा गाता है तो दूसरी भोपी। भोपा के हाथ में रावण हत्था नामक बाजा होता है जिसे वह कमान या गज से बजाता है। रावण हत्था बजाते हुए भोपा कहानी को गाता भी है और बीच-बीच में नाचता भी है। भोपी हाथ में हैण्डल वाला दिया या ढिबरी लिए रहती है। कहानी कहते हुए पड़ में बने चित्र की घटना पर वो रोशनी डालती है।

अब ज़रा कहानी तो सुनो

राजा राव अस्थान जंगल से गुज़र रहे थे। वहाँ उन्हें तालाब में नहाती स्वर्ग की परियाँ दिखीं। उन्होंने उनमें से एक केसरपरी से ब्याह कर लिया। कुछ दिन बाद कोलू नामक गाँव के एक बगीचे में पाबूजी का जन्म हुआ। दाई ने देखा कि नवजात पाबू पर नागिन ने फन उठाकर छाया की हुई है। कुछ दिनों बाद राजा अचानक ही रानी के कमरे में घुस आए तो देखा पाबू को शेरनी दूध पिला रही हैं। केसरपरी को राजा का यूँ बिना दरवाज़ा खटखटाए अन्दर आ जाना अच्छा नहीं लगा। उसने पाबू को वचन दिया कि वह उसके पास फिर आएगी और आसमान में उड़ गई।

बड़े होकर पाबूजी ने एक-से-एक काम किए। सूखी, पथरीली ज़मीन में मीठे पानी के कुएँ खुदवाए। एक कुँआ तो आज भी कोलू गाँव में है। उन्होंने अपने चार दोस्तों के साथ मिलकर कई लड़ाइयाँ लड़ीं और लोगों की मदद की। पाबूजी ऊँच-नीच, जात-पात के सख्त खिलाफ थे। वे राजपूत थे और उनके दोस्त भील और राईका (ऊँट चराने वाले) थे।

इस पीर नायक पाबूजी को देवल चारणी ने अपनी उड़ने वाली घोड़ी केसर कालमी दी थी। शर्त थी कि वे सदा उसकी गायों व ऊँटों की रक्षा करेंगे। केसर कालमी और कोई नहीं, स्वयं पाबूजी की माँ केसरपरी थी। बाद में पाबूजी का ब्याह अमरकोट की राजकुमारी सोढी से होना तय हुआ। अभी चार ही फेरे हुए थे कि केसर ज़ोर-ज़ोर से हिनहिनाने लगी। पाबूजी समझ गए कि ज़रूर देवल चारणी के जानवरों पर मुसीबत आई है। वे फेरे अधूरे छोड़, केसर पर सवार हो भागे। ज़िन्दराव मौका देखकर देवल चारणी की सारी गाएँ व ऊँट ले गया था। भयानक युद्ध हुआ। कई ऐसे मौके आए जब पाबूजी ज़िन्दराव को मार सकते थे। लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं

किया क्योंकि यह दुष्ट खलनायक उनकी बहन का पति था। इस घमासान लड़ाई में आखिर ज़िन्दराव मैदान छोड़कर भाग खड़ा हुआ। पाबूजी देवल चारणी की गायों व ऊँटों को वापस ले आए। उसे दिया वचन तो पूरा हो गया लेकिन पाबूजी खुद बुरी तरह से घायल हो गए। केसर कालमी उन्हें पीठ पर बैठाए आकाश में लुप्त हो गई।

तुमको याद है ना कि पाबूजी की कथा में कुल 172 घटनाएँ हैं। यहाँ बताई कहानी तो समझो बस ट्रेलर है। पूरी कहानी कई रातों तक चलती है। एक रात में सिर्फ दो या तीन पर्चों (चमत्कारी घटनाओं) का ही ज़िक्र हो पाता है। पाबूजी की पड़ अक्सर एक साथ पूरी कभी नहीं सुनाई जाती। सुबह भोपा-भोपी पाबूजी की फोटो की पूजा करते हैं। वे उनसे ऊँट अथवा बीमार को ठीक करने, अच्छी फसल देने आदि की विनती करते हैं। पड़ बाँचने के लिए बुलाने वाला भोपों को बाजरा, गुड़, कपड़ा, पैसा आदि देता है।

एक तरह से पड़ चलते-फिरते मन्दिर हैं जिनके पुजारी ये भील-भोपे होते हैं। सोचो कि बारहवीं-तेरहवीं शताब्दी में हुए ये नायक आज भी अपने लोगों के काम कर रहे हैं। पड़ जब पुरानी होकर फटने लगती है तब भोपे इन्हें पुष्कर ताल में विसर्जित कर देते हैं।

बनाता कौन हैं इन्हें

मज़े की बात है कि कहानी तो भोपे कहते हैं लेकिन ये खुद पड़ नहीं बनाते। शाहपुरा, भीलवाड़ा तथा चित्तौड़ के कपड़ों की रंगाई-छपाई करने वाले नामदेव छीपा या जोशी समुदाय के लोग इन्हें बनाते हैं। पड़ कितनी लम्बी-चौड़ी होगी, कौन-सी घटना कहाँ बनेगी यह सब भोपा तय करता है। पुराने ज़माने में भोपा चित्रकार को एक रुपए का नेग देकर काम शुरू करवाता था। चित्रकार हल्के पीले रंग से पूरे चित्र की मोटी-मोटी रूपरेखा भोपे के सामने ही तैयार कर देता है। इसके बाद भोपा अपने गाँव लौट जाता है तथा एक महीने बाद तैयार पड़ को लेने आता है। पड़ में पाँच रंगों का पारम्परिक रूप से उपयोग होता है जिन्हें पीला, हरा, लाल, नीला व अन्त में काले के क्रम में लगाया जाता है। एक बार में एक ही रंग लगाया जाता है – यानी पूरी पड़ में जहाँ-जहाँ भी हरा रंग लगना होगा वह लग जाने के बाद ही लाल रंग की बारी आएगी। अन्त में काले रंग से सभी आकारों की आउट लाइन बनेगी। सबसे बाद में आँख बनाई जाती है। हरा रंग ताँबे को चूने के पानी में गलाकर, नीला रंग नील से, पीला पिउड़ी से, लाल सिन्दूर तथा अन्य पिगमेन्ट से, काला कालिख से तैयार होते हैं। इन्हें गोंद में घोलकर तैयार किया जाता है।

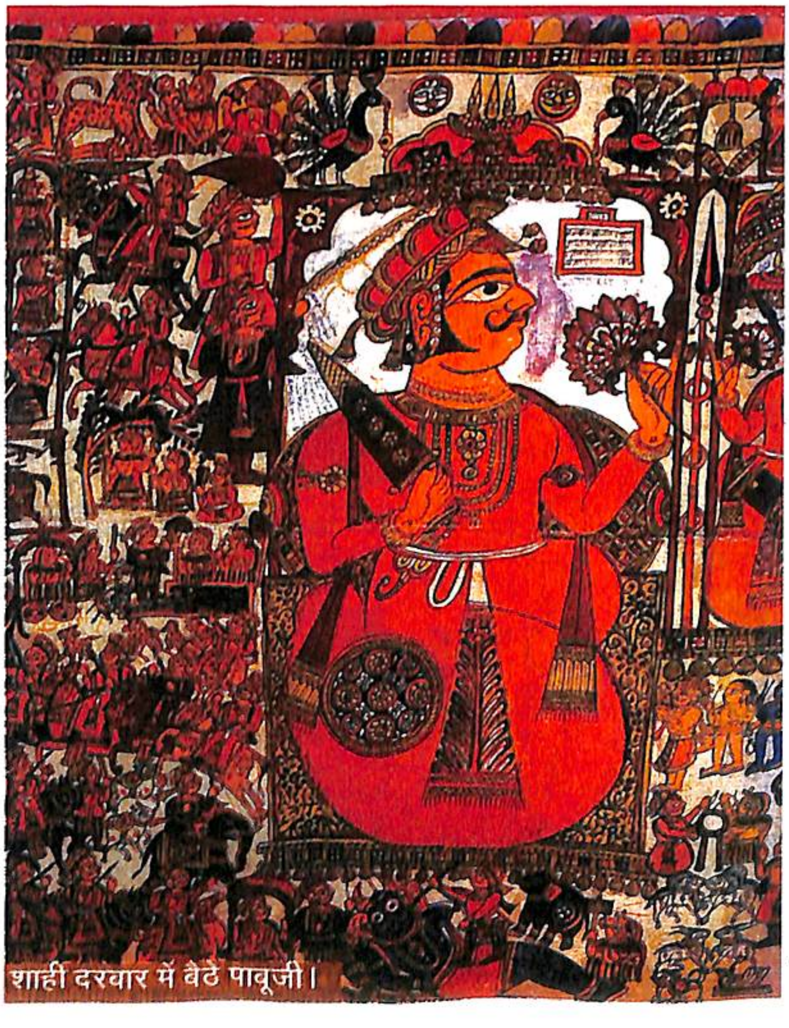

शाही दरबार में बैठे पाबूजी।

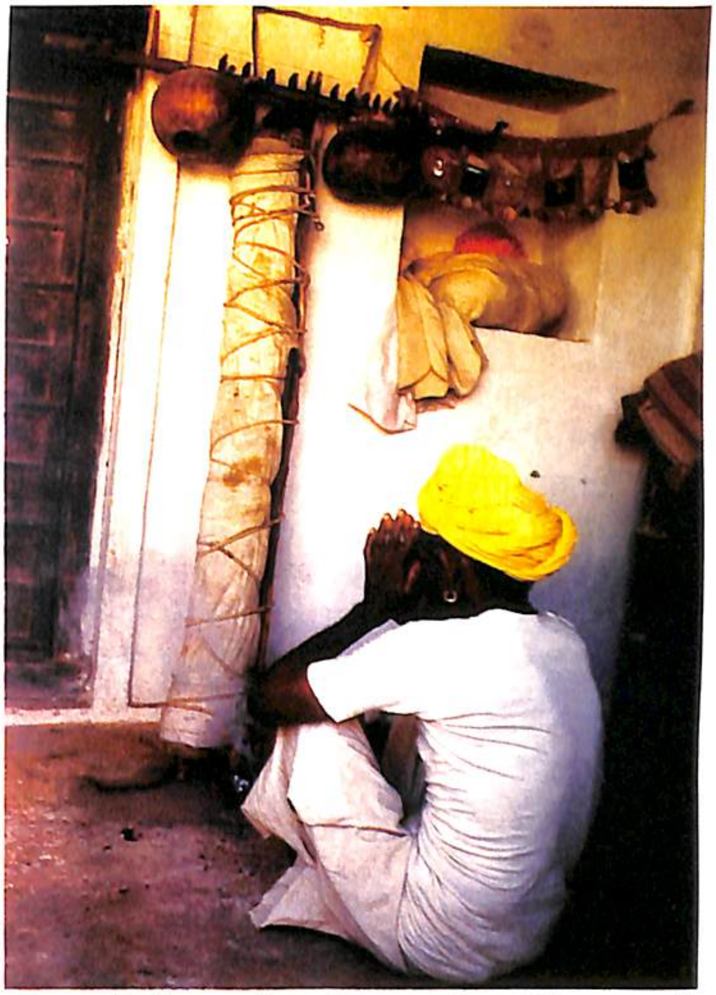

नारायणजी भोपा घर में अपने जन्तर और लपेटे हुए पड़ के आगे हाथ जोड़ते हुए।

आज राजस्थान में पड़ बनाने वाले गिने-चुने परिवार बचे हैं और भोपों को भी लोग पहले की तुलना में कम बुलाते हैं। लेकिन फिर भी आठ-दस गाँव घूमने पर आज भी आपको कोई न कोई भोपा परिवार अपना बोरिया-बिस्तरा और पड़ का रोल लिए दिख ही जाएगा।

सभी चित्र साभार: *पिक्चर शौमैन - इन्साइट्स इनटु द नैरेटिव ट्रेडिशन इन इंडियन आर्ट*

शिवनारायण गौर

मासाब

सफेद पजामा-कुर्ता पहने भीड़ में अलग-से नज़र आने वाले वे एक प्रायमरी स्कूल के मासाब थे। वे भोपाल के एक सरकारी स्कूल में पढ़ाते थे। मासाब के करीब पचास साल पहले के चर्चे आज भी उनके छात्र-छात्राओं की जुबान पर होते हैं। उनकी कक्षा हर समय भरी रहती। अगर कोई स्कूल न आ पाता तो अगले दिन मासाब की कक्षा के बारे में ज़रूर पूछता! उन की कक्षा बड़े मज़े की होती थी। वे तरह-तरह के किस्से सुनाते थे। मासाब जब नौकरी से सेवा निवृत्त हुए तो उनसे एक बच्चे ने पूछा, "मासाब आप साल भर हमें पढ़ाते हैं। कभी छुट्टी पर नहीं जाते तो फिर यात्रा के तमाम अनुभव हमें कहाँ से सुनाते हैं। " मासाब ने अपनी असलियत बयाँ की...

मैं गर्मी की दो महीने की छुट्टी में मैं केवल यात्राएँ ही करता था। अप्रैल में छुट्टी शुरू होते ही मैं जो एक झोला लेकर निकलता तो फिर जुलाई में स्कूल खुलने के समय ही वापस लौटता। 70 रुपए महीने की तंखवाह में पूरे दो महीने दूर-दूर तक घूमना बड़ा मुश्किल था। लेकिन घूमने के मेरे शौक ने इसका रास्ता निकाल ही लिया। मैंने एक जोड़ी भगवा कपड़ा सिलवाए और उनके सहारे कई साल तक यात्राएँ कीं। कपड़े जितने पुराने होते गए यात्राएँ उतनी ही लम्बी और सुखद होती गईं।

असल में मासाब भगवा कपड़े पहनकर एक फटे झोले में अच्छे कपड़े और ज़रूरी सामान लेकर रेलगाड़ी में बैठ जाते। टिकिट-विकिट का कोई झंझट नहीं। लोग उन्हें बाबा समझते। इससे डिब्बे में ना केवल जगह मिल जाती बल्कि खाने-पीने का जुगाड़ भी हो जाता। वैसे तो कोई भी टिकिट चेकर उनसे टिकिट नहीं माँगता पर अगर कोई ज़िद पर अड़ जाता तो सज़ा के तौर पर उन्हें ट्रेन से उतार दिया जाता। इससे मासाब के मिशन पर कोई असर नहीं पड़ता। उनका उद्देश्य तो घूमना ही था। जिस स्टेशन पर उन्हें उतारा जाता वे वही शहर घूम लेते। भगवा कपड़े बदलकर वे दिनभर घूमते। रात होते ही अगली गाड़ी पकड़कर आगे की यात्रा पर निकल जाते। हाँ, अगली यात्रा शुरू करने से पहले भगवा कपड़े ज़रूर पहन लेते। यही कपड़े तो उनकी यात्रा की टिकिट थी।

वैसे तो वे खाने-पीने लायक पैसे घर से लेकर निकलते थे पर कई बार लोग कपड़ों को देखकर उनके खाने-पीने की व्यवस्था भी कर देते थे। सालों तक इस तरह की गई यात्राओं से मासाब के पास अनुभवों का खज़ाना जमा हो गया था। जहाँ-जहाँ भी रेलगाड़ी चलती वो सारा इलाका उनका घूमा होता। पढ़ाते वक्त वे बच्चों से इन अनुभवों को साझा करते। मासाब आज इस दुनिया में नहीं हैं लेकिन उनके छात्र-छात्राएँ उनके अनुभवों को याद करते और खुश होते हैं।

मेरा पन्ना

तरुण, होशंगाबाद, म.प्र.

चित्र पहेली

मान्या की बच्ची

एक-एक अक्षर पढ़ डाला
तार-तार अखबार
पत्र-पत्रिकाएँ बिखराईं
पेज फटे दो-चार

कॉपी-पेन-किताब-रजिस्टर
पूरा-पूरा दफ्तर
मौका उसे मिले
तो छूटे एक न
कागज़ पत्तर

देखी अपनी बिखरी फाइल
हक्के-बक्के काकू
नाम लिखा दो अब
शाला में
मान्या हुई पढ़ाकू

गिरिजा कुलश्रेष्ठ

आमोद कारखानिस

अण्डे का फण्डा

अण्डा एक दिलचस्प चीज़ है। इससे क्या-क्या नहीं बन जाता ... केक, ऑमलेट, ब्रेड-अण्डा, उबला अण्डा। सिर्फ खाने-खिलाने ही नहीं सोचने-समझने में भी अण्डे अपने कमाल दिखाते हैं। जीव विज्ञान में अण्डे की बात तो छिड़ ही जाएगी पर भौतिक विज्ञान में भी अण्डा अपनी करामात दिखाता है। चलो कुछ रोज़मर्रा की घटनाओं से बात शुरू करते हैं...

मान लो तुम्हारे सामने दो अण्डे रखे हैं। इनमें से एक उबला हुआ है और दूसरा, कच्चा। क्या बिना फोड़े तुम बता सकते हो कि कौन-सा अण्डा उबला हुआ है? ज़रा आज़माकर देखो।

अण्डों को टेबल पर रखकर ज़ोर से घुमाओ। जैसे ही वे घूमने लगें, क्षण भर के लिए अपनी उँगली छोड़ दो। एक अण्डा फिर से घूमने लगेगा पर एक रुक जाएगा। जो अण्डा रुक जाएगा वह उबला अण्डा होगा। क्यों?

ऐसा क्यों होता है?

समझने के लिए एक मग में थोड़ा पानी लो। मग को धीरे-धीरे घुमाना शुरू करो। क्या मग के घूमने के साथ उसके अन्दर का पानी भी घूमने लगा? अब मग को घुमाना बन्द करके उसे टेबिल पर रख दो। क्या मग को टेबिल पर रखते ही उसका पानी घूमना बन्द हो गया? मग के ठहरने के बाद भी पानी कुछ देर तक घूमता रहता है। जब हमने मग को घुमाया उसके साथ पानी को भी गति प्राप्त हुई। मग को तो हमने रोक दिया परन्तु पानी घूमता रहा। *(न्यूटन का कोई नियम याद आया...?)*

अण्डे में भी यही होता है। कच्चे अण्डे के अन्दर तरल रहता है। अण्डे पर उँगली रखकर हमने उसका घूमना रोक दिया पर अन्दर का तरल घूमते ही रहता है। इस वजह से अण्डा फिर घूमना शुरू कर देता है।

रिया जब सातवीं बार रसोई से आई और उसने कहा कि अण्डे अभी तक नहीं उबले तो सभी हैरान थे। आठवीं बार रिया जब उठी तो सभी साथ हो लिए। रसोई में रिया ने चाकू उठाया और अण्डे में घुसाने की कोशिश की। "उफ, अभी तक कड़क का कड़क है।" रिया बुदबुदाई, "अभी तक नहीं उबला।"

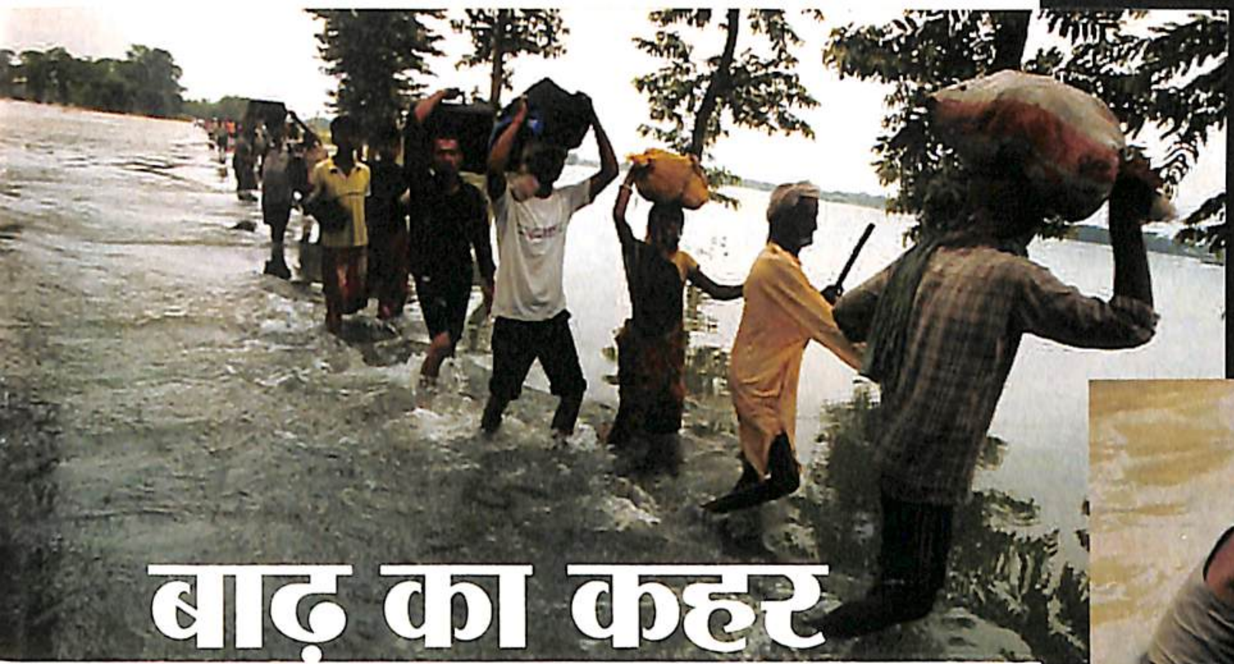

बाढ़ का कहर

तुम्हें तो मालूम ही होगा कि इन दिनों हमारे लाखों लोग बाढ़ से जूझ रहे हैं। उनसे उनके मकान, सामान, पालतू जानवर सब छूट गए हैं। इनमें से कई लाख लोगों के पास एक झोंपड़ी और शायद एकाध पालतू जानवर रहे होंगे। वे छोटे-मोटे काम करके अपना गुज़ारा कर रहे थे। उनके पहले से मुश्किलों भरे जीवन में इस बाढ़ ने और मुसीबतें भर दीं।

इस बाढ़ में कितनी ही जानें गई होंगी। जो किसी तरह बाढ़ से बच गए उन्हें कपड़े-खाने के लाले पड़ रहे हैं। हालाँकि सरकार तथा अन्य संस्थाएँ उनकी मदद के लिए काम कर रही हैं पर यह अभी तक नाकाफी साबित हुई है। पूरे देश से लोग मदद कर रहे हैं। लोग अपने आसपास से कपड़े, रुपए-पैसे, दवाएँ जुटा रहे हैं और उन्हें बिहार के बाढ़ प्रभावित इलाकों में पहुँचा रहे हैं। तुम्हारे स्कूल या मोहल्ले में भी शायद लोग मदद के लिए सामग्री जुटा रहे होंगे।

तुम्हारी हमउम्र रिद्धि इन्दौर में रहती है। दूसरी कक्षा में पढ़ती है। कपड़े और खिलौने खरीदने के लिए वह पिछले एक साल से पैसे जोड़ रही थी। उसकी छोटी-सी गुल्लक अब लगभग भर गई थी। एक दिन रिद्धि ने बिहार की बाढ़ से पीड़ित एक बच्चे की तस्वीर अखबार में देखी। उसने अपने दादा से उस बच्चे के बारे में पूछा। दादा ने उसे विस्तार से बाढ़ के बारे में बताया। चुनौतियों का सामना कर रहे लोगों और बच्चों के बारे में बताया। रिद्धि यह सब सुनकर उदास हो गई। उसने अपनी गुल्लक तोड़ी और सारी की सारी चिल्हर-रुपए दादा को दे दिए। यह कहते हुए कि वे इन रुपयों को एक अखबार के कोष में दान कर दें जो बिहार के लोगों की मदद के लिए बनाया गया है।

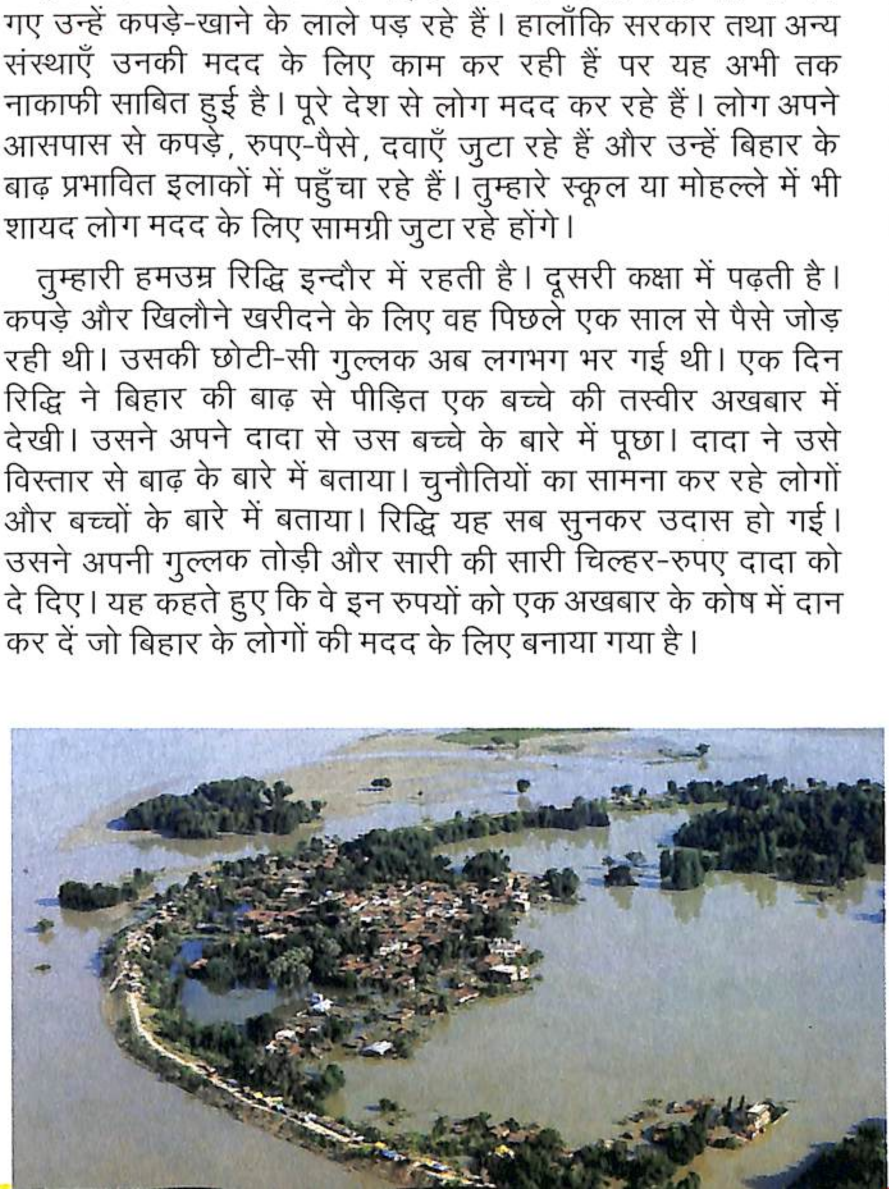

एक अपील

एक अनुमान के हिसाब से बाढ़ से लगभग दस लाख लोग बेघर हो गए हैं।

लगभग दस हज़ार स्कूलों को नुकसान पहुँचा है। *बिहार सर्व शिक्षा अभियान*, *यूनीसेफ* तथा *प्रथम* ने मिलकर एक पहल की है। इसमें इन संगठनों के लोग बाढ़ प्रभावित इलाकों में जाएँगे और बच्चों के बीच कुछ गतिविधियाँ करेंगे।

इन गतिविधियों के दौरान बच्चों को मज़ेदार किताबें आदि भी दी जाएँगी।

कहानियों की और दूसरी किताबें, चार्ट, कॉपी, रंग आदि जुटाने में तुम बड़ी मदद कर सकते हो। जिन किताबों को तुम या तुम्हारे दोस्त पढ़ चुके हैं उन्हें *प्रथम* के इस पते पर भेज सकते हो।

प्रथम
7 आई.ए.एस. कॉलोनी
किदवईपुरी
पटना 800001
ई-मेल: pratham.biharflood@gmail.com
संजय कुमार: 0 94316 02357
रुकमणी बैनर्जी: 0 98105 36145

अमीर खुसरो की पहेलियाँ

यहाँ दी गई पहेलियाँ अमीर खुसरो ने लिखी हैं। अमीर खुसरो दिल्ली में रहते थे। तेरहवीं शताब्दी में बलवन और तथा कुछ तुगलक सुल्तानों के राज दरबारी थे वे। वे निज़ामुद्दीन औलिया के शिष्य थे। आज भी दिल्ली में औलिया की दरगाह के बगल में खुसरो की मज़ार है। खुसरो को फारसी, अरबी, तुर्की और हिन्दी के अलावा संस्कृत भी आती थी। हालाँकि वे फारसी के कवि थे पर उन्होंने हिन्दी में भी कई रचनाएँ लिखीं। खुसरो एक अच्छे गायक भी थे। उन्होंने कई राग व ताल तैयार किए। कहते हैं कि सितार का आविष्कार उन्होंने ही किया।

दिल्ली स्थित अमीर खुसरो की दरगाह

उनकी कुछ पहेलियाँ यहाँ दे रहे हैं। उनकी कुछ पहेलियों के अर्थ पहेलियों के भीतर ही छुपे हैं। जैसे:

सावन भादों बहुत चलत है
माघ पूस में थोरी
अमीर खुसरो यों कहें
बूझ पहेली मोरी

इस पहेली का उत्तर "मोरी" यानी नाली है।

ज़रा बूझो यहाँ दी गई किन अन्य पहेलियों में यह जादू है।

चित्रः अतनु राय

दूध में दिया
दही से लिया

●

मिला रहे तो नर रहे
अलग होय तो नार
सोने का सा रंग है
कोई चतुर बिचार

●

पंसारी का तेल
कुम्हार का बर्तन
हाथी की सूँड
नवाब की पताका

●

एक नारी के हैं दो बालक
दोनों एक ही रंग
एक फिरे एक ठाड़ा रहे
फिर भी दोनों संग

●

सर पर जाली पेट से खाली
पसली देख एक एक
निराली

●

टूटी टूट के धूप में पड़ी
जों जों सूखी हुई बड़ी

●

बीसों का सिर काट लिया
न मारा ना

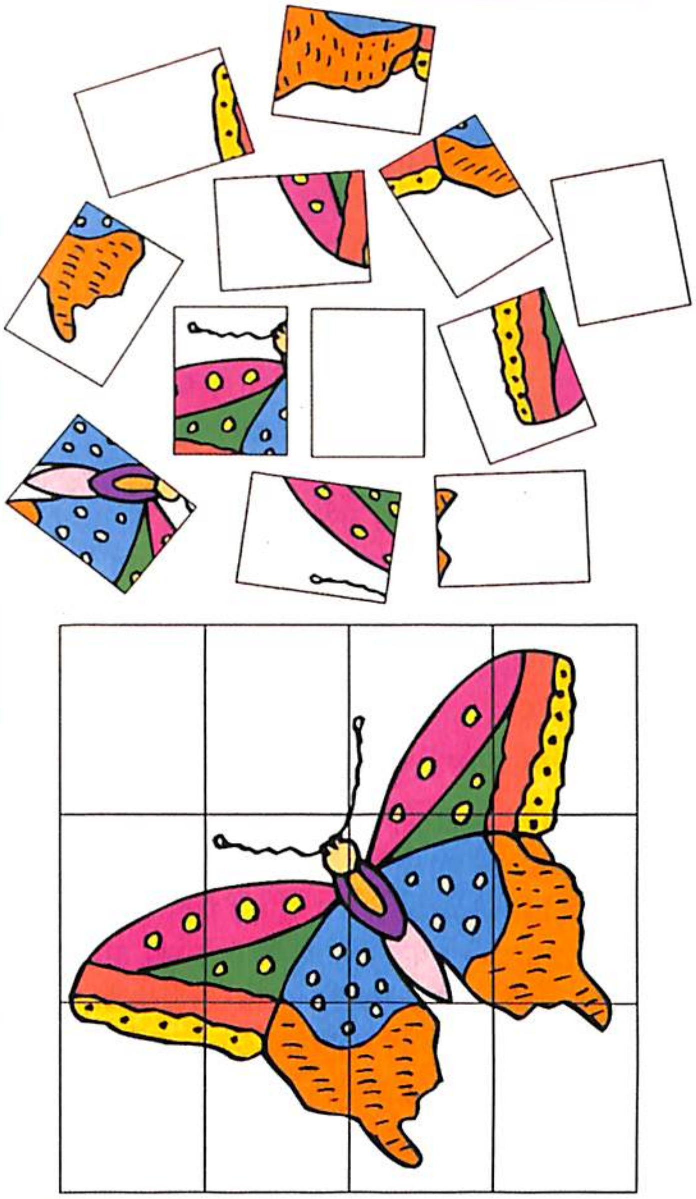

टुकड़े जोड़कर तितली बनाओ

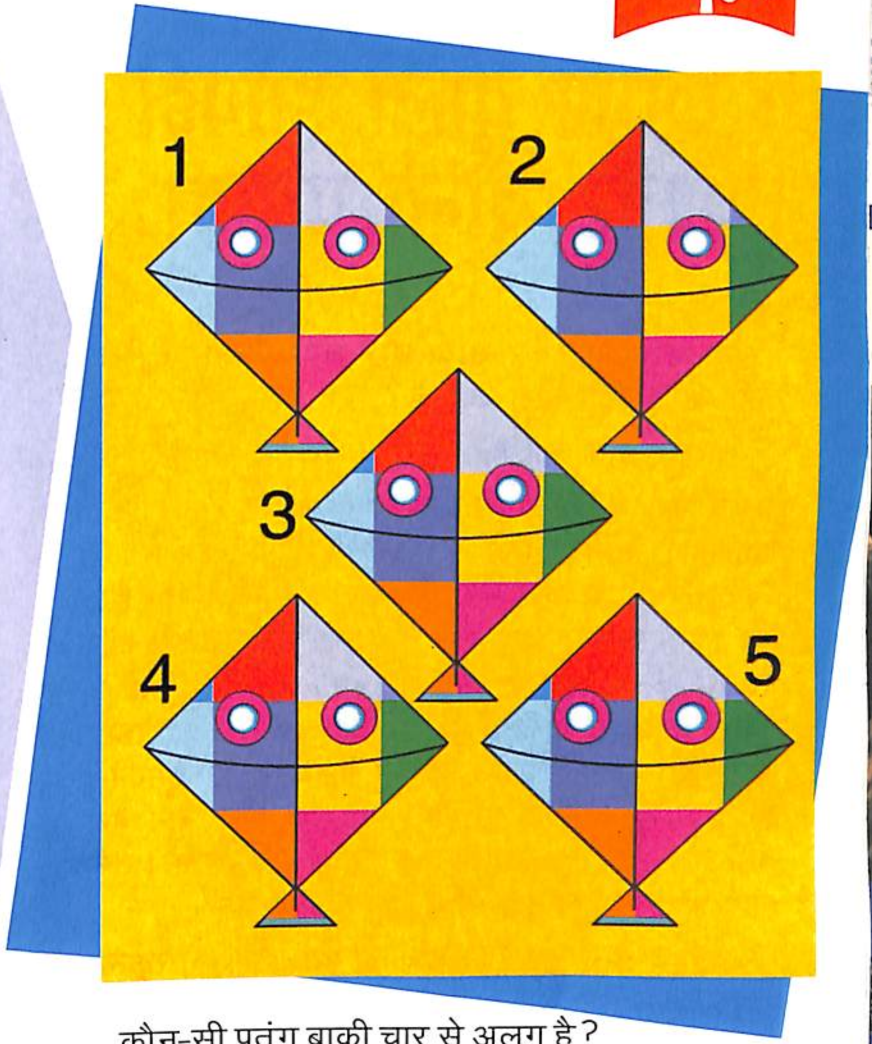

कौन-सी पतंग बाकी चार से अलग है?

चित्र: धर्मपाल मिन्टू

इन दोनों चित्रों में कुल कितने अन्तर हैं?

चित्र: जितेन्द्र ठा

विनोद कुमार शुक्ल

हरी घास की छप्पर वाली झोपड़ी और बौना पहाड़! (XII)

क्या उसने बोलकर सोचा था? अगर उसने बोलू से कहा था तो अब बोलू कहाँ है?

"बोलू तू चुप क्यों है?" भैरा ने भैरा की आवाज़ सुनी।

तब भैरा ने चिल्लाकर कहा, "बोलू भैरा मैं हूँ। तुम कहाँ हो? इतने में भैरा ने सुना भैरा की आवाज़ में, "बोलू लगता है छोटू भैरा की आवाज़ में बोल रहा है। हम लोगों को बुद्धू बना रहा है।" भैरा मुड़कर उस ओर बढ़ा जिधर से आवाज़ आई थी। पेड़ों के कारण वहाँ अँधेरा था। वह झाड़ियों को हटाता हुआ तेज़ जा रहा था। भैरा ने कहा, "नहीं बोलू मैं भैरा हूँ। और तुमको ढूँढ रहा हूँ। तुम मुझको दिख नहीं रह हो।" "तुम भैरा नहीं हो। भैरा मेरे साथ है। तुम झूठ बोल रहे हो। तुम जादूगर हो या छोटू?" बोलू की आवाज़ आई।

"नहीं बोलू मैं भैरा हूँ। तुम धोखा मत खाना। मैं स्कूल जा रहा हूँ। तुम सब लोगों को ढूँढ रहा था। जो भैरा तुम्हारे साथ है वह भैरा नहीं है। जादूगर है। मेरा भेष बनाकर तुम्हारे साथ है। या छोटू मेरी आवाज़ का भेष बना रहा है। तुम दोनों मुझे बुद्धू बना रहे हो।" भैरा ने कहा।

"धोखा तुम दे रहे हो। भैरा मेरे साथ है। तुम अपना असली नाम बताओ।" भैरा की आवाज़ थी।

"भैरा मेरा असली नाम है।" भैरा ने कहा।

अँधेरा जगह-जगह छुपा हुआ था। अँधेरा अचानक इस तरह पास आ जाता जैसे ताक में छुपा हुआ था। अँधेरा जहाँ था वहाँ सन्नाटा था। अँधेरे और सन्नाटे में दोस्ती थी। अँधेरे में कोई जाता नहीं इसलिए वहाँ सन्नाटा होता है।

बोलू को ढूँढने के चक्कर में भैरा उस ओर चला आया जिधर एक खतरनाक गड्ढा था। उसे याद आया, वह सम्भल गया। दो कदम बाद ही गड्ढा था। बहुत गहरा। उसमें गिर जाएँ तो ऊपर आना मुश्किल। भैरा के लिए तो बहुत कठिन। गड्ढे के तल में थोड़ा बरसात का पानी भरा था। पानी में चन्द्रमा की परछाँई थी। चन्द्रमा गड्ढे में गिरा हुआ दिख रहा था। देखकर लगता कि कैसे निकलेगा। गढ़ढा आए दिन गहरा होता जा रहा था। यह एक ऐसी जगह थी जहाँ मुरम थी। लोग मुरम खोद कर ले जाते। और खोदते हुए नीचे उतरने के लिए सीढ़ी बनाते जाते। पर सीढ़ी जगह-जगह टूट गई थी। नीचे उतरना और ऊपर चढ़ना कठिन हो गया था। भैरा खुद तो सम्भल गया पर अपने बिस्तर, दरी और चादर को सम्भाल नहीं पाया। हाथ से छूटकर बिस्तर गड्ढे में गिर गया। बिस्तर पानी तक नहीं पहुँच पाया था। खुरदुरी मुरम की दीवाल से लुढ़कते हुए पहले ही ठहर गया था। वह ज़ोर से चिल्लाया, "बोलू मेरा बिस्तर गड्ढे में गिर गया है। मेरी मदद करो। मैं गड्ढे में बिस्तर लेने उतर रहा हूँ।" अब उसका सारा ध्यान बिस्तर को पा लेने में था।

"भैरा गड्ढे में मत उतरना। हम लोग आ रहे हैं।" बोलू की आवाज़ थी।

"रुक जा भैरा मैं आ रही हूँ।" कूना की आवाज़ थी।

भैरा बहुत दिनों से अनसुना करना भूल रहा था। उसने अनसुना किया। उसने पहली सीढ़ी पर सम्भल कर पैर रखा। फिर दूसरी पर। गड्ढे के आसपास के बड़े पेड़ों की हिलती-डुलती अँधरी छाया नीचे पड़ रही थी। इससे भ्रम होता था। यह भ्रम वैसा ही था जैसे पास और दूर के लेंस वाला चश्मा पहनकर नीचे देखते हुए उतरने से होता है।

बीनू की आवाज़ आई, "मैं छोटू बोल रहा हूँ। मैं भी हूँ।"

"तुम बीनू बोल रहे हो।" भैरा ने कहा। छोटू जो सबकी आवाज़ में बोल कर सबको उपस्थित करता था। अपने को 'छोटू' बोलकर उपस्थित नहीं करा पा रहा था। छोटू केवल दिखकर अपने को उपस्थित करा पाता था।

"मैं छोटू बोल रहा हूँ और अकेला हूँ।" बोलू की आवाज़ में उसने कहा।

"तुम बोलू बोल रहे हो।" भैरा ने कहा।

"सच में मैं छोटू बोल रहा हूँ। कसम से।" कूना की आवाज़ पास से आई। कूना की आवाज़ में, "बोल रहा हूँ क्यों है, बोल रही हूँ क्यों नहीं है?" शरारत छोटू कर रहा है या कूना कर रही है। भैरा ने सिर उठा कर देखा। छोटू जैसा लड़का खड़ा था। नीचे झाँक रहा था।

तीन सीढ़ी वह उतर चुका था। चौथी सीढ़ी पर पैर रखते समय उसका पैर सीढ़ी के कोने पर पड़ा। कोना टूट गया और वह गड्ढे में गिर गया। उसे अधिक चोट नहीं लगी थी, दोनों हथेलियाँ छिल गई थीं। भैरा का मन रोने को हुआ। पर रोया नहीं। पानी में गिरने से वह बच गया था। उसने वहाँ चन्द्रमा को देखा। गड्ढे में उसका अकेलापन कुछ कम हुआ। तभी एक बादल का टुकड़ा आया और चन्द्रमा को छुपा लिया। गड्ढे के पानी में सफेद बादल की परत अँधेरे की

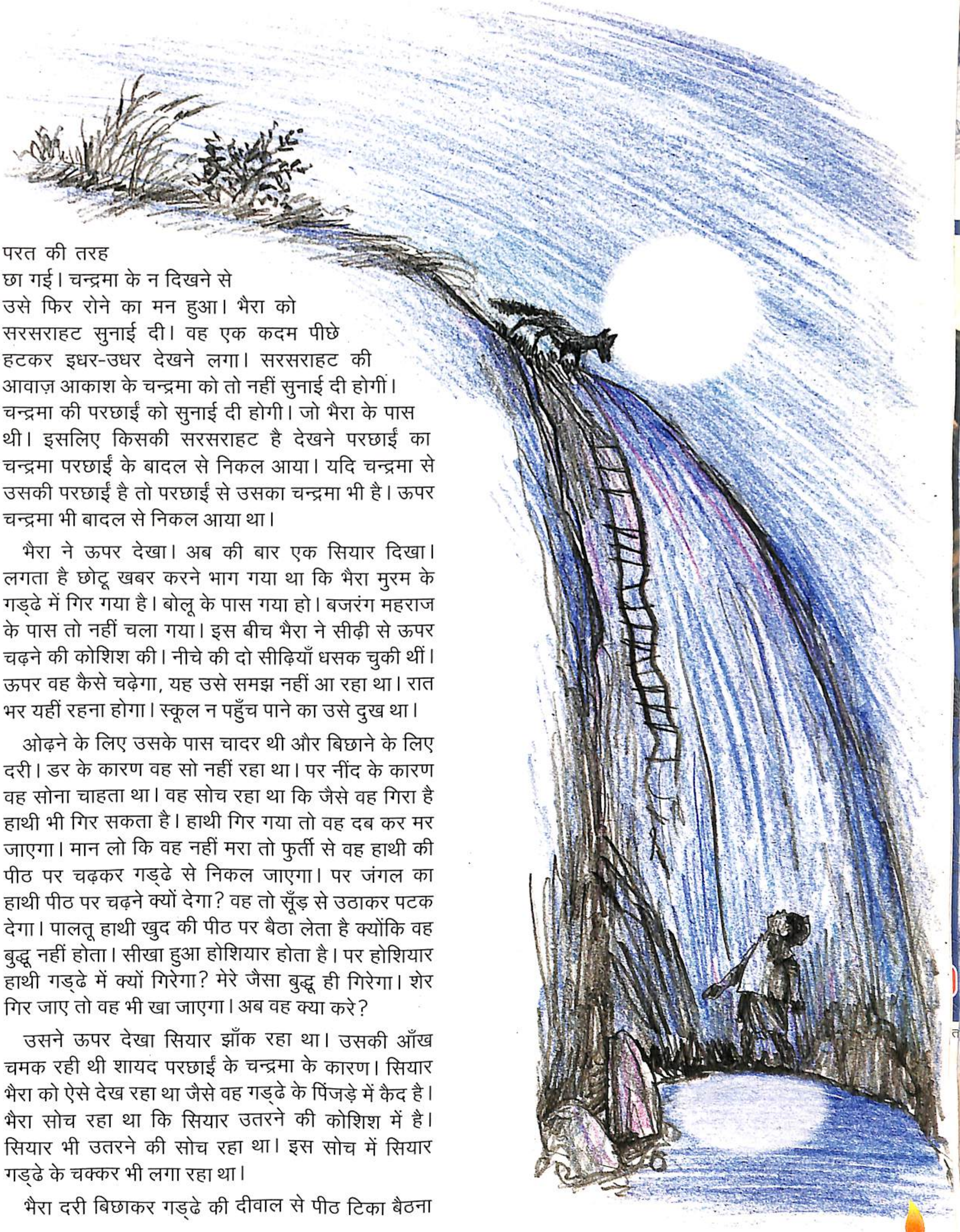

परत की तरह छा गई। चन्द्रमा के न दिखने से उसे फिर रोने का मन हुआ। भैरा को सरसराहट सुनाई दी। वह एक कदम पीछे हटकर इधर-उधर देखने लगा। सरसराहट की आवाज़ आकाश के चन्द्रमा को तो नहीं सुनाई दी होगी। चन्द्रमा की परछाई को सुनाई दी होगी। जो भैरा के पास थी। इसलिए किसकी सरसराहट है देखने परछाई का चन्द्रमा परछाई के बादल से निकल आया। यदि चन्द्रमा से उसकी परछाई है तो परछाई से उसका चन्द्रमा भी है। ऊपर चन्द्रमा भी बादल से निकल आया था।

भैरा ने ऊपर देखा। अब की बार एक सियार दिखा। लगता है छोटू खबर करने भाग गया था कि भैरा मुरम के गड्ढे में गिर गया है। बोलू के पास गया हो। बजरंग महराज के पास तो नहीं चला गया। इस बीच भैरा ने सीढ़ी से ऊपर चढ़ने की कोशिश की। नीचे की दो सीढ़ियाँ धसक चुकी थीं। ऊपर वह कैसे चढ़ेगा, यह उसे समझ नहीं आ रहा था। रात भर यहीं रहना होगा। स्कूल न पहुँच पाने का उसे दुख था।

ओढ़ने के लिए उसके पास चादर थी और बिछाने के लिए दरी। डर के कारण वह सो नहीं रहा था। पर नींद के कारण वह सोना चाहता था। वह सोच रहा था कि जैसे वह गिरा है हाथी भी गिर सकता है। हाथी गिर गया तो वह दब कर मर जाएगा। मान लो कि वह नहीं मरा तो फुर्ती से वह हाथी की पीठ पर चढ़कर गड्ढे से निकल जाएगा। पर जंगल का हाथी पीठ पर चढ़ने क्यों देगा? वह तो सूँड़ से उठाकर पटक देगा। पालतू हाथी खुद की पीठ पर बैठा लेता है क्योंकि वह बुद्धू नहीं होता। सीखा हुआ होशियार होता है। पर होशियार हाथी गड्ढे में क्यों गिरेगा? मेरे जैसा बुद्धू ही गिरेगा। शेर गिर जाए तो वह भी खा जाएगा। अब वह क्या करे?

उसने ऊपर देखा सियार झाँक रहा था। उसकी आँख चमक रही थी शायद परछाई के चन्द्रमा के कारण। सियार भैरा को ऐसे देख रहा था जैसे वह गड्ढे के पिंजड़े में कैद है। भैरा सोच रहा था कि सियार उतरने की कोशिश में है। सियार भी उतरने की सोच रहा था। इस सोच में सियार गड्ढे के चक्कर भी लगा रहा था।

भैरा दरी बिछाकर गड्ढे की दीवाल से पीठ टिका बैठना

चाहता था। चादर निकालकर उसने ओढ़ ली थी। मच्छर काट रहे थे और हल्की-सी ठण्ड भी लग रही थी। कुछ पत्थर पड़े थे। अपने बचाव के लिए उसने उन्हें इकट्ठा करना शुरू किया। एक बड़ा पत्थर उठाया तो उसके नीचे से तीन बिच्छू निकले। इधर-उधर भाग कर वे छुप गए। भैरा ने न मालूम कितने पत्थर उठाकर देखे होंगे परन्तु पहली बार उसे बिच्छू मिले।

तभी शेर के दहाड़ने की आवाज़ आई। आवाज़ इतनी पास से और ज़ोर से आई थी कि मुरम की दीवाल से चिपके हुए मुरम के कुछ कंकड़ झरे। और लुढ़कते हुए पानी में डूब गए। सियार के भागने की आवाज़ आई थी। हो सकता है कि बजरंग महराज ने बोला हो और सुनकर शेर दहाड़ा हो। हो सकता है कि बजरंग महाराज ने "भैरा" पुकारा हो इसलिए दहाड़कर शेर ने "भैरा" कहा हो। यदि वह "पिताजी" कह कर जवाब दे तो क्या शेर भी "पिताजी" दहाड़ेगा। "पिताजी" भैरा चिल्लाया। तभी बिलकुल पास से शेर के बच्चे के दहाड़ने की आवाज़ आई। और गड्ढे की दीवाल से एक मुरम का टुकड़ा झर कर लुढ़कता हुआ पानी में गिरा।

भैरा गड्ढे में गिर गया है यह बताने छोटू पहले बस्ती में गया। वह भूल गया था कि बस्ती में लोग नहीं मिलेंगे। बस्ती सुनसान थी। वह स्कूल की ओर दौड़ा। रास्ते में उसे टॉर्च लिए बजरंग होटल का भजिया बनाने वाला मिला। वह बहुत तेज़ी से जा रहा था। छोटू ने उसे रोका, "भैरा मुरम के गड्ढे में गिर गया है।" छोटू हाँफ रहा था। परन्तु जो आवाज़ थी वह भैरा की थी। भजिया बनाने वाला किसी के भी रोकने से रुकने वाला नहीं था। शायद बजरंग महराज ने कहा हो सीधे जाना, कहीं रुकना नहीं। परन्तु भैरा की आवाज़ सुन रुक गया। उसके मुँह में निकला "भैरा"। उसने ध्यान से छोटू को देखा कि भैरा है? छोटू-छोटू था, भैरा तो नहीं था। उसे लगा भैरा कि चिन्ता में उसे भैरा की आवाज़ सुनाई दी। "मुझे मालूम है।" कह कर वह भागने जैसा चल पड़ा। "तुम को कैसे मालूम हुआ?" बोलू की आवाज़ में छोटू ने कहा। अब कौन बोला? "कौन है भाई?" वह मुड़ा। उसे वही लड़का दिखा जिसने उसे भैरा की आवाज़ में रोका था। वह बताना नहीं चाहता था। परन्तु वह आश्चर्य की स्थिति में था। इसी स्थिति के कारण उसके मुँह से निकला, "बजरंग महाराज ने बताया।" फिर वह इस तरह मुड़ा कि बेकार रुक गया था। वह दौड़ पड़ा। उसने एक बच्ची को सुना, "बजरंग महाराज को कैसे पता चला।" यह कूना की आवाज़ थी। वह कूना का नहीं जानता था। ये बच्ची कहाँ से आ गई? वह पलटा तो उसने उसी लड़के को देखा। उसने छोटू के चेहरे पर टॉर्च का उजाला फेंका। एक प्यारा-सा लड़का दिखा। टॉर्च के प्रकाश से छोटू की आँखें मिचमिचा गईं। वह गुस्सा हुआ। उसने बजरंग महराज की आवाज़ में कहा, "यह सब क्या है? भैरा के पास जाओ।" उसी समय शेर दहाड़ने लगे। शेर बिलकुल पास दहाड़ रहे थे। भजिया बनाने वाला शेर की आवाज़ सुन किसी सुरक्षित जगह चला जाता परन्तु बजरंग महराज के कहे अनुसार वह मुरम-खदान की तरफ ही दौड़ा। जब वह दौड़ रहा था तो टॉर्च थरथरा रही थी। थरथराती रोशनी जिस पर जितनी देर पड़ती वह उतनी देर थरथराते हुए दिखती। चाहे वह चट्टान हो, पेड़ हों, बस्ती के कुछ दूर झोपड़ी हो, धरती हो। आकाश तक यदि टॉर्च का प्रकाश जाता तो आकाश भी थरथराते हुए दिखता।

जारी...

एकलव्य के प्रकाशन

हर किताब : एक अनुभव

कुछ मज़ेदार किताबों से मुलाकात

पिप्पी, एमिल, मार्दी और कार्लसन के कारनामे

चार शैतानों की कारगुज़ारियों की किताब....

इसे पढ़ना आसान नहीं है! इसे पढ़ोगे तो हँसोगे और इतना हँसोगे कि पेट पकड़ने का मन करेगा। पर हाथ किताब छोड़ने से मना कर देंगे और आँखें किताब से हटने से...फिर क्या करोगे? इसलिए यह किताब खरीदने से पहले सौ बार सोच लेना।

कीमत - 170 रुपए

छोटेचाचा अब आपके शहर में

इस किताब के छोटेचाचा अरे वही, जिन्हें छुटपन में बन्दरों ने किडनैप कर लिया था।

वही, जो सिलाई मशीन की आवाज़ निकालते हैं

अरे वही....छोड़ो यार, अब छोटेचाचा के बारे में ऐसी सौ चीज़ें हैं तुम खुद ही पढ़ लो।

कीमत - 65 रुपए

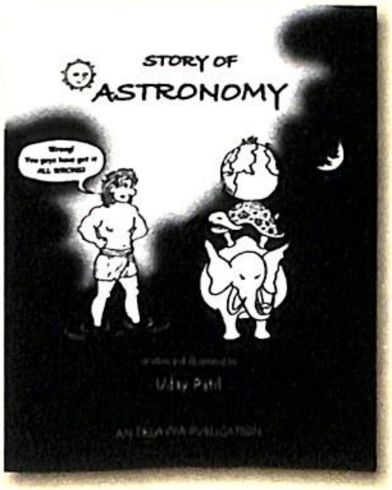

स्टोरी ऑफ एस्ट्रोनॉमी

तारे-चाँद, ग्रह, गुरुत्व-आकर्षण, प्रकाश वर्ष... सब चीज़ें सिर के ऊपर से चली जाती हैं? क्यों? क्योंकि आसमान सिर के ऊपर है। पर एक किताब है जो तुम्हें ऐसी तमाम बातें समझने में मदद करेगी।

कीमत - 80 रुपए

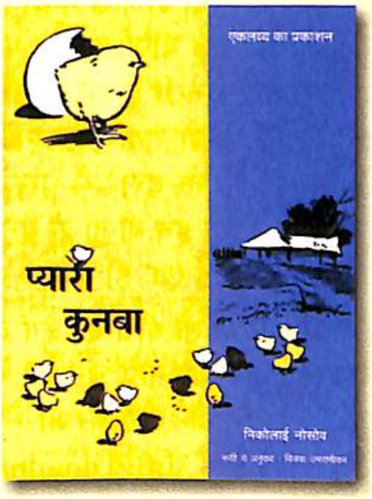

प्यारा कुनबा

एक बेहद रोमांचक कथा। तुम्हारे हमउमर बच्चों की मण्डली ने तय किया कि वे इन्क्युबेटर बनाकर ही रहेंगे। उन्होंने न सिर्फ इन्क्युबेटर बनाया बल्कि उसमें अण्डे भी रखे। और अण्डों से चूज़े भी निकले....

कीमत - 35 रुपए

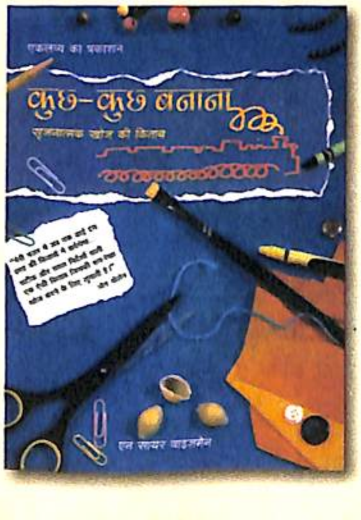

कुछ-कुछ बनाना

सैंकड़ों खिलौने बनाने के आसान तरीके। खिलौने ऐसे जिन्हें तुम हमेशा बनाना चाहोगे ...

कीमत - 110 रुपए

किताबें मँगाने के लिए लिखें

एकलव्य/पिटारा pitara@eklavya.in

ई-10, शंकर नगर, बी.डी.ए. कॉलोनी,
शिवाजी नगर
भोपाल - 462016, म.प्र.
फोन - (0755) 2550976, 2671017

एकलव्य की वेबसाइट www.eklavya.in से भी किताबें मँगवाई जा सकती हैं।

डाक खर्च - किताब की मूल कीमत की दस प्रतिशत राशि।
कृपया चैक एकलव्य के नाम से बनवाएँ।

चकमक के पाठकों को बीस प्रतिशत की छूट

पृष्ठ 9 का बाकी हिस्सा

प्रयोगों से निष्कर्ष

मेंडल ने इन प्रयोगों से दो निष्कर्ष निकाले। पहला निष्कर्ष तो यह था कि प्रत्येक गुण के दो कारक होते हैं। यानी फूल के रंग के गुण के दो कारक हैं – एक बैंगनी और दूसरा सफेद कारक। परागकण व बीजांड बनते समय ये कारक अलग-अलग हो जाते हैं। यानी परागकण या बीजांड में या तो बैंगनी कारक होगा या सफेद कारक। जब बीजांड और परागकण का मिलन होता है तो जो बीज बनता है उसमें रंग के दो कारक होते हैं। ये दोनों बैंगनी, दोनों सफेद या एक बैंगनी-एक सफेद हो सकते हैं। मगर ये एक-दूसरे में घुलते-मिलते नहीं हैं, स्वतंत्र ही रहते हैं। तभी तो इन बीजों से बने पौधे के फूल के परागकण या बीजांड में कोई एक ही कारक जाएगा।

मगर जब दोनों रंग के कारक हैं तो बीच का रंग क्यों नहीं बन जाता? या चितकबरे फूल क्यों नहीं बनते? मेंडल ने निष्कर्ष निकाला कि एक ही गुण के दो कारकों में से एक हावी और दूसरा दब्बू होता है। इन्हें उन्होंने dominant और recessive कहा था। उन्होंने कहा कि रंग के मामले में बैंगनी कारक हावी रहता है और सफेद कारक दब्बू। किसी फूल में दोनों कारक बैंगनी हो सकते हैं, दोनों कारक सफेद हो सकते हैं या एक कारक बैंगनी और दूसरा सफेद हो सकता है। जब किसी बीज में बैंगनी कारक और सफेद कारक दोनों हों, तो फूल का रंग बैंगनी होता है क्योंकि बैंगनी कारक सफेद को दबा देता है। सफेद फूल आने के लिए ज़रूरी है कि दोनों कारक सफेद हों। मेंडल ने इस बात के लिए अक्षरों का सहारा लिया। वे कहते थे कि फूलों के रंग के दो कारक R और r हैं। R बैंगनी के लिए और r सफेद के लिए। इनमें से हावी कारक को कैपिटल अक्षर से लिखा जाता है।

यह बात एक चित्र के माध्यम से देखते हैं। वास्तव में इस प्रयोग के परिणामों को समझना तब बहुत आसान हो जाता है जब हमारे पास मेंडल के निष्कर्ष मौजूद हों। वैसे यह बात कई अन्य प्रयोगों के सन्दर्भ में भी सही है।

मेंडल ने सच्चे सफेद और सच्चे बैंगनी फूल वाले पौधों के पर-परागण से जो बीज प्राप्त किए उन्हें बोने पर तो सारे पौधों में बैंगनी फूल ही लगे थे क्योंकि सारे बीज Rr थे। (बैंगनी कारक हावी जो ठहरा।) अब इनसे परागकण या बीजांड बनेंगे जो जिनमें रंग के कारक निम्नानुसार होंगे (परागकण या बीजांड के लिए सामान्य नाम जन्यु है)।

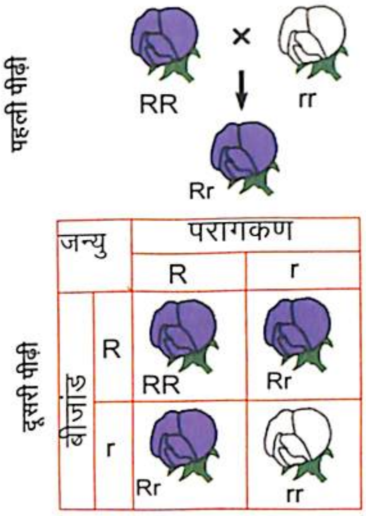

अब कम से कम तीन पौधे ऐसे हैं जिनमें एक कारक R है। तो इन पौधों में बैंगनी फूल लगेंगे, चाहे दूसरा कारक कोई भी हो। सफेद फूल लगने के लिए तो ज़रूरी है कि दोनों कारक r हों। यह परिस्थिति तो 4 में से मात्र एक बीज में बनी है। तो साफ है कि हर चार में से तीन पौधों पर बैंगनी और एक पर सफेद फूल लगेंगे। यही मेंडल ने अपने प्रयोगों में पाया था।

यहाँ एक-दो बातें और बता दूँ। एक तो यह कि उपरोक्त निष्कर्ष एक-दो बीजों के साथ प्रयोग करके कभी नहीं मिल सकते। ये निष्कर्ष तभी मिल सकते हैं जब बड़ी संख्या में बीज लिए जाएँ। दूसरी बात यह है कि यदि तुम तालिका को ध्यान से देखो तो दूसरी पीढ़ी में गुणों का अनुपात ठीक 3:1 नहीं आता है। कहीं अनुपात 2.82:1 तो कहीं 3.15:1 है। मेंडल के निष्कर्ष से एक बात और साफ होती है – हालांकि सफेद रंग पहली पीढ़ी में दिखता नहीं है मगर उसका कारक मौजूद है। यानी कई गुण दो पीढ़ी बाद फिर से प्रकट हो सकते हैं।

अभी हमने मेंडल के प्रयोग का एक ही हिस्सा देखा है। इसका निष्कर्ष यह है कि यदि कोई गुण दो अलग-अलग रूपों में नज़र आता है तो उसके दो कारक होते हैं और परागकण या बीजांड (यानी जन्यु) बनते समय ये कारक अलग-अलग हो जाते हैं। यह मेंडल का पहला नियम है। आजकल हम इन कारकों को जीन्स कहते हैं। अनुवांशिकी यानी पीढ़ी-दर-पीढ़ी गुणों के प्रसार का विज्ञान आज मेंडल से बहुत आगे बढ़ चुका है। अगली बार हम मेंडल के दूसरे नियम की बात करेंगे और देखेंगे कि मेंडल किन मायनों में भाग्यशाली थे कि वे ये नियम खोज पाए।

पृष्ठ 5 का बाकी हिस्सा

आलू में क्या-क्या

आलू में कार्बोहाइड्रेट बहुत होता है। ताज़े आलू में 80 फीसदी पानी होता है। आलू के ठोस पदार्थ में 60 से 80 फीसदी स्टार्च होता है। इसमें प्रोटीन की मात्रा दालों व अन्य अनाजों के बराबर होती है। यही वजह है कि कई विकसित देशों में अनाज का स्थान आलू लेता जा रहा है। इसमें इतना विटामीन-सी होता है कि अगर कोई वयस्क 150 ग्राम वज़नी एक आलू उसके छिलके सहित खाए तो उसे एक दिन की विटामीन-सी की आधी खुराक (100 मिलीग्राम) मिल जाएगी। अगर पौष्टिकता की बात करें तो बच्चों को दिनभर में जितना प्रोटीन चाहिए, उसका 10 फीसदी तो 100 ग्राम आलू से ही मिल सकता है। आलू आयरन, विटामीन बी और पोटेशियम, फॉस्फोरस और मैग्नेशियम जैसे अन्य कई खनिजों का भी स्रोत होता है। लेकिन गड़बड़ यह होती है कि बनाने में आसान होने और स्वादिष्ट होने की वजह से आलू को तेल या घी में तलकर खाने का रिवाज़ बढ़ाता जा रहा है। इसमें कैलोरी की मात्रा काफी अधिक हो जाती है। इससे मोटापे की समस्या बढ़ रही है। फास्ट फूड के रूप में आलू के अधिकाधिक इस्तेमाल से दिल और मधुमेह की बीमारियाँ भी ज़ोर पकड़ती जा रही हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय आलू केन्द्र के अनुसार आलू का सबसे बड़ा फायदा यह है कि इसका उत्पादन अन्य फसलों की तुलना में ज़्यादा व जल्दी होता है। इसके लिए ज़मीन की ज़रूरत भी कम होती है और उत्पादन पर जलवायु की कठिन परिस्थितियों का भी ज़्यादा असर नहीं होता है। इसके पौधे का 85 फीसदी तक हिस्सा खाने लायक होता है, जबकि अन्य अनाजों के पौधों का महज़ 50 फीसदी हिस्सा ही खाने के काम आता है। अनाज की उत्पादकता अपने चरम पर पहुँचती जा रही है, जबकि आलू की उत्पादन क्षमता को बढ़ाने की अभी गुंजाइश बाकी है। इसलिए ही कहा जा सकता है कि विकासशील देशों में आलू में ही खाद्य संकट के समाधान की क्षमता है।

यूँ किया जाता है संरक्षण

आलू ऐसी फसल नहीं है जिसे हर समय उगाया जा सके। इसलिए उसको सालों तक सहेजकर रखना ज़रूरी है। आलू में पानी बहुत ज़्यादा होने की वजह से अगर उन्हें सही ढंग से नहीं रखा जाए तो वे जल्दी ही खराब हो जाते हैं। एंडीज़ के लोगों का आलू सहेजने का अपना तरीका होता था। वे आलू से पानी को निकालकर उसे सुखा लेते थे। ऐसे आलू को "चूनो" कहा जाता है। इसके लिए आलू को ज़मीन पर फैलाकर रातभर रखा जाता था। जब आलू ठण्ड में जम जाते तो उन्हें पैरों से कुचलकर पानी निकाल लेते थे। यह प्रक्रिया लगातार चार-पाँच दिन तक दोहराई जाती। इससे आलू पूरी तरह सूख जाता था। जब भी इस्तेमाल करना होता पानी में उबालकर उसे नरम बना लिया जाता।

उबले आलुओं का ज़ायका

ब्रेड-आलू पिज़्ज़ा

इस अनोखे पिज़्ज़ा में हमने ब्रेड पर कई चीज़ों की परतें बिछाईं। तुम इसमें बदलाव करने के लिए स्वतंत्र हो। हाँ, अब पिज़्ज़ा बनाते हैं। ब्रेड पर सबसे पहले पुदीने की चटनी, उसपर टमाटर की चटनी (या सॉस), फिर उबले और किसे आलूओं की परत फैलाओ। उसपर नमक, मिर्च बुरक दो। सबसे ऊपर नमकीन की परत फैला दो।

ब्रेड की जगह पराँठे लेकर देखो। कैसा लगा?

आलू चाट

उबले आलू के छिलके उतारकर उन्हें छोटे-छोटे टुकड़ों में काट लो। इनसे तीन तरह की चाट बन सकती है:

1. गरम-गरम आलू में नमक, पिसी काली मिर्च और मक्खन डालकर मज़े से खाओ।
2. कटे आलुओं में काला नमक, जीरामन या भुने जीरे का पाउडर, हरा धनिया और निम्बू का रस निचोड़ दो। बड़ा ही मज़ेदार लगता है यह चाट।
3. दही में काला नमक, सफेद नमक और भुना जीरा पाउडर डालकर अच्छे से मिला लो। अब इसमें कटे आलू डालकर आलू-चाट खाओ और खिलाओ।

आलू एक, नाम अनेक

इन्का लोग - पापा

अधिकांश लैटिन अमेरिकी देश- पापा

स्पेन - पटाटा

अँग्रेज़ी-पोटेटो

गुजराती - बटाका या बटाटा

फ्रांस - ग्राउंड एप्पल

फिनलैंड - अर्थ पीअर

सितम्बर माह की चित्र-पहेली का हल

घों		प	तं	ग		क	मा	न
स	पे	रा		म	शा	ल		
ला		त	ब	ला		म	छ	ली
	के		गी		तो		त	
	त	मा	ता		प	ट	री	
मा	ली			दु		मा		
इ			आ	म		ट		ख
क	च	ह	री		द	र	वां	ज़ा
	क्की			बाँ	स			ना

इस पन्ने में प से शुरू होने वाली कितनी चीज़ें हैं?

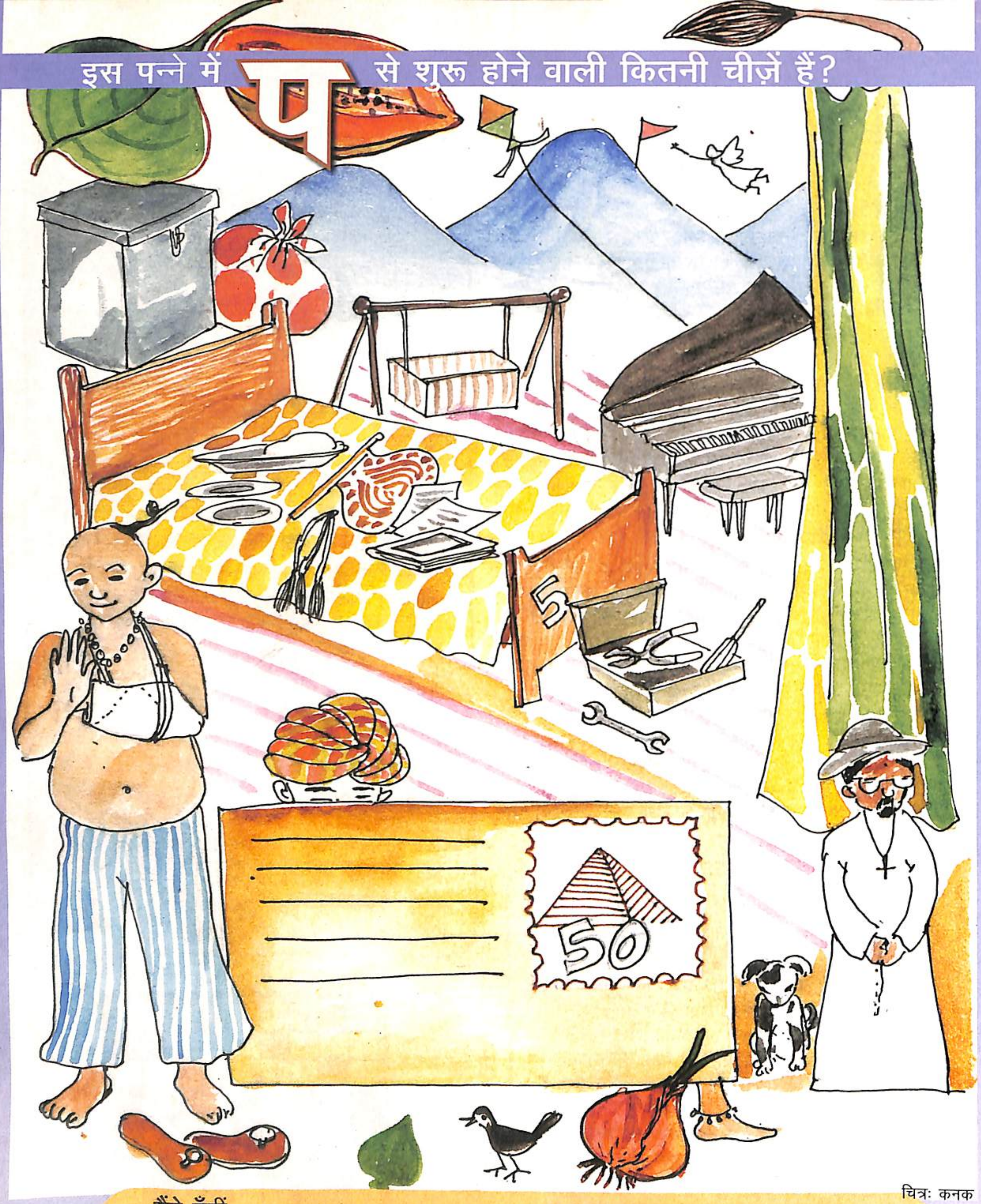

चित्रः कनक

मैंने ढूँढ़ीं....

"प" से शुरू होने वाली कौन-कौन-सी चीज़ें हमसे छूट गईं? उनके चित्र बनाओ।

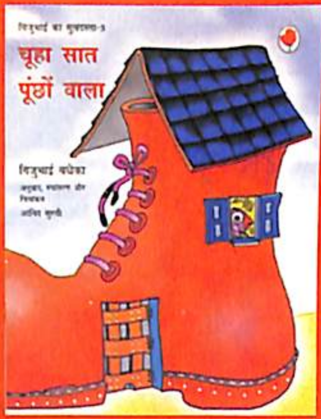

रंग बिरंगी मुर्गी
रु. 35.00
चबर-चबर
रु. 35.00
चूहा सात पूंछो वाला
रु. 35.00
बर्फीली बूंद
रु. 35.00
आंखों देखी
रु. 40.00
मुनिया रानी
रु. 30.00
नकल बिन अकल
रु. 40.00
बेदम बेदुमा
रु. 40.00
अमवा भैया नीमवा भैया
रु. 40.00
चोर मचाए शोर
रु. 40.00

300 रुपए
में 100
कहानियां

बच्चों के लिए

गिजुभाई का गुलदस्ता

(भाग 1–10)

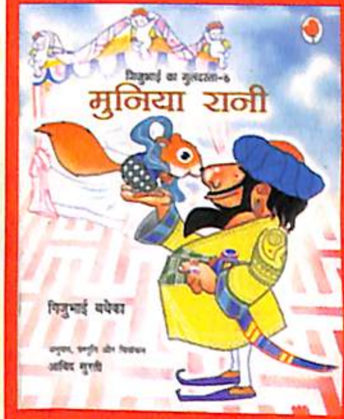

इन कहानियों में हंसी है, गुदगुदी है, संवाद हैं, गीत भी हैं। कहानियों में रहस्य और रोमांच की दुनिया समाई है। इनके पात्र राजा-रानी भी हैं और बिल्ली-बंदर भी। ये सभी कहानियां सदियों से अलग-अलग भाषा-बोलियों में बच्चों का मनोरंजन और बोध-ज्ञान बढ़ाती रही हैं। भारतीय परिवेश में मनोरंजक तरीके से शिक्षा के पक्षधर **गिजुभाई बधेका** ने ऐसी ही कई कहानियों को एकत्र कर बच्चों के बीच प्रस्तुत किया था।

मूल गुजराती में लिखी गईं ऐसी 100 कहानियों का अनुवाद, रूपांतरण और रंग-बिरंगा चित्रांकन **आबिद सुरती** ने किया है और इन्हें **नेशनल बुक ट्रस्ट** ने 10 अलग-अलग पुस्तकों में प्रस्तुत किया है।

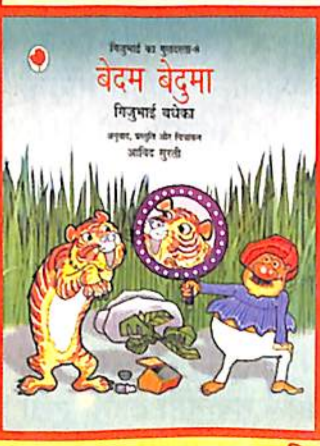

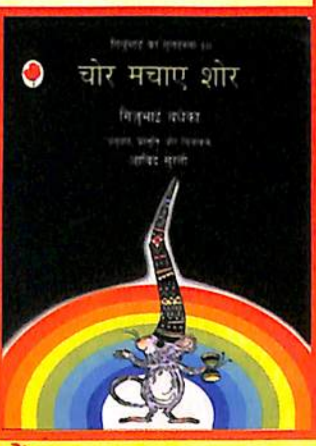

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें :

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

नेहरू भवन, 5 इंस्टीट्यूशनल एरिया, वसंत कुंज फेज-II, नई दिल्ली-110070
दूरभाष : 91-11-24526169, 24526164, 24526174
ई-मेल : nbtindia@ndb.vsnl.net.in वेबसाइट : http://www.nbtindia.org.in
मुंबई : दूरभाष व फैक्स : 91-22-23720442 ई-मेल : nbtindiamumbai@yahoo.com
बेंगलुरु : दूरभाष व फैक्स : 91-80-26711994 ई-मेल : nbtindiasro@vsnl.net

नेशनल बुक ट्रस्ट किताब क्लब के सदस्य बनें और नेशनल बुक ट्रस्ट के प्रकाशनों पर 20 प्रतिशत की छूट पाएं

कौए भी औज़ार बनाते हैं

न्यू कैलेडोनिया का यह डाक टिकिट औज़ार बनाने वाले कौओं के सम्मान में निकाला गया।

किसी भी समस्या का हल इंसान दो तरीकों से करता है – भाषा से तथा औज़ार बनाने व उसका इस्तेमाल करने की क्षमता से। इंसान में ये दोनों हुनर विकसित होने में करोड़ों साल लगे। कई अध्ययनों में पाया गया है कि दूसरे जीव भी "भाषा" के ज़रिए एक दूसरे से बातचीत करते हैं। इसके अलावा, वे औज़ार भी बना लेते हैं। औज़ारों से वे ऐसे काम भी कर पाते हैं जो केवल शरीर से करना मुश्किल है।

औज़ार बना पाने के मामले में इंसान धरती के सभी जीवों में सबसे आगे हैं। दूसरे स्थान पर चिम्पैंज़ी आता है। और तीसरे पर .... शायद कौआ! चिम्पैंज़ी में यह हुनर विकसित होना आश्चर्य की बात नहीं है क्योंकि लगभग 60 लाख साल (ढाई लाख पीढ़ी) पहले, मनुष्य और चिम्पैंज़ी एक ही मोड़ पर खड़े थे। विकास की यात्रा में यह कोई खास दूरी नहीं है। पर कौए? मानव जाति और पक्षियों के बीच फासला 31 करोड़ साल का है।

दक्षिण प्रशान्त महासागर स्थित न्यू कैलेडोनिया द्वीप के कौए कौआ प्रजाति में सबसे माहिर हैं। ये पक्षी टहनियों से हुक (कुंडी) बनाकर पेड़ों के छेदों में लार्वा के अण्डे तलाशते हैं। कड़क पत्तियों को आकार देकर वे नुकीले औज़ार भी तैयार करते हैं। उनसे ज़मीन पर पड़ी पत्तियों-टहनियों में से वे कीड़े-मकोड़े ढूँढ पाते हैं।

वैज्ञानिकों का कहना है कि दिमागी योग्यता और चतुराई समूह में रहने से तेज़ी से पनपती और विकसित होती है। इसीलिए समूह में रहने वाले प्राणी ज़्यादा अक्लमन्द होते हैं और उनका मस्तिष्क भी अक्सर बड़ा होता है। जैसे डॉल्फिन, चिम्पैंज़ी और मानव। चिम्पैंज़ी के शरीर और मस्तिष्क के आकार के बीच का अनुपात कौए के शरीर और उसके मस्तिष्क के आकार के बीच के अनुपात के बराबर है।

औज़ार बनाने के लिए मानसिक योग्यता के अलावा, कल्पना और दूरगामी सोच की भी अहम भूमिका है।

यहाँ कौए के औज़ार बनाने की क्षमता के कुछ उदाहरण पेश हैं। ये उदाहरण इंग्लैंड में स्थित Behavioural Ecology Research Group के शोध से लिए गए हैं। यह केन्द्र मानव और अन्य जीवों के व्यवहार पर प्रयोग तथा सैद्धान्तिक विश्लेषण करता है। औज़ार बनाने का गुण जानवरों में वैसे ही समाया है जैसे मकड़ी का जाल बुनने का कौशल। पर इस काम में अकलमन्दी की क्या भूमिका हो सकती है? अकलमन्दी तब दिखती है जब समस्या का पहले से ही कोई हल उपलब्ध न हो, और न ही कर-करके सीखने की कोई गुंजाइश हो। ऐसी खास स्थितियों में कौआ औज़ारों को कैसे बनाता है या उनका चुनाव करता है इसे समझने के लिए केन्द्र के वैज्ञानिकों ने कुछ प्रयोग किए।

केन्द्र में लगभग 20 न्यू कैलेडोनियन कौए हैं जिनके माध्यम से ये प्रयोग किए जाते हैं। यहाँ बेट्टी और एबल नाम के दो कौओं का ज़िक्र है।

पहले प्रयोग में काँच की एक नली में माँस रखा गया। फिर विभिन्न लम्बाई की टहनियाँ रखी गईं। वैज्ञानिकों ने देखा कि भोजन पाने के लिए दोनों कौओं ने अक्सर पर्याप्त लम्बाई की टहनी चुन ली। फिर वैज्ञानिकों ने भोजन को छोटे छेद में रखा और इस बार विभिन्न मोटाई की टहनियाँ रखी गईं। इस बार भी कौओं ने पर्याप्त मोटाई की टहनी चुनी। इससे स्पष्ट होता है कि समस्या को देख-समझने के बाद ही कौए अनुकूल औज़ार चुनते हैं।

पर औज़ार कैसे काम करते हैं, इसकी कोई समझ है कौओं में? वैज्ञानिकों ने इसे जाँचने के लिए माँस को एक "बाल्टी" में रखकर बाल्टी को "कुएँ" (काँच की नली) में उतार दिया। कुएँ से बाल्टी निकालने के लिए कुछ अन्य सामग्री भी रखी गई। पहले हुकनुमा टहनी रखी जिसकी मदद से बेट्टी और एबल ने कुएँ से बाल्टी खींचकर माँस प्राप्त किया।

फिर, सीधे तार का टुकड़ा और हुकनुमा तार का टुकड़ा रखा गया। इस बार एक नई बात दिखी। एबल ने हुकनुमा सीधे तार से बाल्टी निकालने की बहुत कोशिश की, पर असफल रही। फिर उसने सीधे तार के एक छोर को टेप में

चित्र 4: इस प्रयोग में काँच की नली में रखे माँस को टहनी से ढकेलकर निकालना है। बेट्टी प्रयोग सामग्री को ध्यान से देखती है।

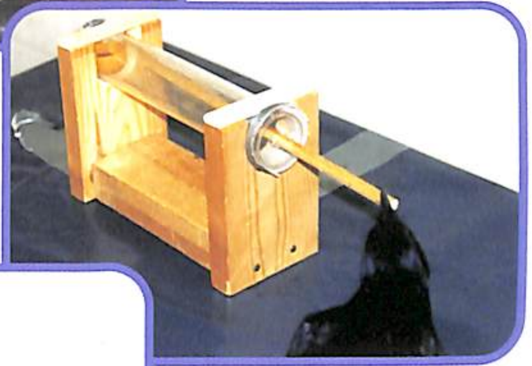

चित्र 5: नली में रखे माँस को टहनी की मदद से ढकेलती बेट्टी।

चित्र 6: सफल बेट्टी माँस को खाती हुई।

चित्र 1

चित्र 2

चित्र 3

चित्र 1: तार को मोड़कर बेट्टी ने औज़ार तैयार किया जो उसने चोंच में पकड़ रखा है। चित्र 2: हुकनुमा तार की मदद से बेट्टी "कुएँ" में रखी "बाल्टी" को फँसाकर बाहर खींच रही है। चित्र 3: बेट्टी बाल्टी को ऊपर खींच लाती है।

चित्र 7: हुकनुमा टहनी की मदद से बाल्टी निकालने की कोशिश में लगी बेट्टी।

चित्र 8: हुकनुमा टहनी की मदद से एबल कुएँ से बाल्टी को खींच लाता है।

चित्र 9: बाल्टी से प्राप्त माँस को खाते हुए एबल।

फँसाया। दूसरे छोर को चोंच से मोड़कर एक हुक बनाया जिससे बाल्टी निकाली। यानी, बेट्टी ने इस काम के लिए एक नया औज़ार बनाया – जाँच-पड़ताल करके नहीं, बल्कि हालिया अनुभव से।

यह पहला उदाहरण है जहाँ किसी जानवर ने विशेष समस्या हल करने के लिए एक नया औज़ार तैयार किया।

साभार: Behavioural Ecology Research Group

प्रस्तुति: रेक्स डी रोज़ारियो

ंजीयन क्र. 50309/85 के अन्तर्गत भारत सरकार के समाचार पत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा पंजीकृत। डाक पंजीयन क्र. म.प्र./261/ भोपाल/2006-08

उत्तराखण्ड राज्य के कुमाऊँ इलाके का एक छोटा-सा शहर है अल्मोड़ा। यहाँ का दशहरा और यहाँ की रामलीला दोनों खूब मशहूर हैं। कभी रामलीला में भाग लेने लोग कलकत्ता, मुम्बई, दिल्ली से यहाँ आते थे। "हुक्का क्लब" तो आज भी मनोरंजन से भरपूर रामलीला करने के लिए मशहूर है। यह क्लब रामलीला के सभी पात्रों की वेशभूषा, गहने आदि सब कुछ खुद ही तैयार करता है। रामलीला में शास्त्रीय संगीत का प्रयोग इसे और मधुर बनाता है। लगभग एक महीने पहले से अलग-अलग ईश्वर और धर्म में विश्वास करने वाले लोग रामलीला की तैयारियों में जुट जाते हैं। इतने लोगों के मिलकर काम करने से यह रामलीला और मीठी हो जाती है। आमतौर पर रामलीला में स्त्री पात्रों की भूमिका भी पुरुष ही करते हैं पर अल्मोड़ा की रामलीला में ऐसा नहीं होता है। यहाँ महिलाएँ और पुरुष मिल-जुलकर भूमिकाएँ करते हैं। दशहरे के समय लगता है पूरा अल्मोड़ा दशहरा मैदान पर आ गया है। राक्षसों के एक से एक भयानक और विशाल पुतले ढोल-नगाड़े, बाजे-गाजे, नाच-गीत के साथ बाज़ारों में घुमाए जाते हैं। पिछले दशहरे की कुछ झलकें तुम्हारे लिए...

प्रस्तुति - विनीता जोशी जोशी, अल्मोड़ा

स्वामी रैक्स डी रोज़ारियो प्रकाशक, मुद्रक सी. एन. सुब्रह्मण्यम की ओर से निदेशक, एकलव्य फाउण्डेशन द्वारा एकलव्य, ई-10 शंकर नगर, 61/2 बस स्टॉप के पास, भोपाल-462016, (म.प्र.) से प्रकाशित तथा आर. के. सिक्युप्रिन्ट प्रा. लि. प्लॉट नम्बर 15-बी, गोविन्दपुरा इंडस्ट्रियल एरिया, गोविन्दपुरा, भोपाल - 462021 (फोन: 0755 - 2687589) से मुद्रित। सम्पादक: सुशील शुक्ल।